सूरह हज

तम्हीदी कलिमात

सूरह हज को बाज़ मुफ़स्सरीन मदनी सूरत मानते हैं। इसकी वजह यह है कि इसमें मुनाफ़िक़ीन का ज़िक्र भी है और जिहाद व क़िताल के अहकाम भी हैं, और यह दोनों मौज़ूआत मदनी सूरतों में मिलते हैं। इसके अलावा इस सूरत की बाज़ आयात की सूरतुल बक़रह (मदनी) की आयात के साथ बहुत गहरी मुशाबेहत पाई जाती है। लेकिन इस ज़िमन में मुझे उन मुफ़स्सरीन से इत्तेफ़ाक़ है जो इसे मक्की सूरत क़रार देते हैं। अलबत्ता इसकी कुछ आयात या तो सफ़र-ए-हिजरत के दौरान नाज़िल हुईं या हुज़ूर ﷺ के मदीने पहुँचने के फ़ौरन बाद (मुताअले के दौरान मुतालक़ा आयात की निशानदेही की जायेगी)। यही वजह है कि यह आयात मक्की आयात से मुख़्तलिफ़ नज़र आती हैं।

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

आयात 1 से 10 तक

یٰۤاَیُّهَا النَّاسُ اتَّقُوۡا رَبَّكُمۡ ۚ اِنَّ زَلۡزَلَةَ السَّاعَةِ شَیۡءٌ عَظِیۡمٌ ﴿۱﴾ یَوۡمَ تَرَوۡنَهَا تَذۡهَلُ كُلُّ مُرۡضِعَةٍ عَمَّاۤ اَرۡضَعَتۡ وَتَضَعُ كُلُّ ذَاتِ حَمۡلٍ حَمۡلَهَا وَتَرَی النَّاسَ سُكٰرٰی وَمَا هُمۡ بِسُكٰرٰی وَلٰكِنَّ عَذَابَ اللّٰهِ شَدِیۡدٌ ﴿۲﴾ وَمِنَ النَّاسِ مَنۡ یُّجَادِلُ فِی اللّٰهِ بِغَیۡرِ عِلۡمٍ وَّیَتَّبِعُ كُلَّ شَیۡطٰنٍ مَّرِیۡدٍ ۙ﴿۳﴾ كُتِبَ عَلَیۡهِ اَنَّهٗ مَنۡ تَوَلَّاهُ فَاَنَّهٗ یُضِلُّهٗ وَیَهۡدِیۡهِ اِلٰی عَذَابِ السَّعِیۡرِ ﴿۴﴾ یٰۤاَیُّهَا النَّاسُ اِنۡ كُنۡتُمۡ فِیۡ رَیۡبٍ مِّنَ الۡبَعۡثِ فَاِنَّا خَلَقۡنٰكُمۡ مِّنۡ تُرَابٍ ثُمَّ مِنۡ نُّطۡفَةٍ ثُمَّ مِنۡ عَلَقَةٍ ثُمَّ مِنۡ مُّضۡغَةٍ مُّخَلَّقَةٍ وَّغَیۡرِ مُخَلَّقَةٍ لِّنُبَیِّنَ لَكُمۡ ؕ وَنُقِرُّ فِی الۡاَرۡحَامِ مَا نَشَآءُ اِلٰۤی اَجَلٍ مُّسَمًّی ثُمَّ نُخۡرِجُكُمۡ طِفۡلًا ثُمَّ لِتَبۡلُغُوۡۤا اَشُدَّكُمۡ ۚ وَمِنۡكُمۡ مَّنۡ یُّتَوَفّٰی وَمِنۡكُمۡ مَّنۡ یُّرَدُّ اِلٰۤی اَرۡذَلِ الۡعُمُرِ لِكَیۡلَا یَعۡلَمَ مِنۡۢ بَعۡدِ عِلۡمٍ شَیۡـًٔا ؕ وَتَرَی الۡاَرۡضَ هَامِدَةً فَاِذَاۤ اَنۡزَلۡنَا عَلَیۡهَا الۡمَآءَ اهۡتَزَّتۡ وَرَبَتۡ وَاَنۡۢبَتَتۡ مِنۡ كُلِّ زَوۡجٍۭ بَهِیۡجٍ ﴿۵﴾ ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الۡحَقُّ وَاَنَّهٗ یُحۡیِ الۡمَوۡتٰی وَاَنَّهٗ عَلٰی كُلِّ شَیۡءٍ قَدِیۡرٌ ﴿۶﴾ وَّاَنَّ السَّاعَةَ اٰتِیَةٌ لَّا رَیۡبَ فِیۡهَا ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ یَبۡعَثُ مَنۡ فِی الۡقُبُوۡرِ ﴿۷﴾ وَمِنَ النَّاسِ مَنۡ یُّجَادِلُ فِی اللّٰهِ بِغَیۡرِ عِلۡمٍ وَّلَا هُدًی وَّلَا كِتٰبٍ مُّنِیۡرٍ ۙ﴿۸﴾ ثَانِیَ عِطۡفِهٖ لِیُضِلَّ عَنۡ سَبِیۡلِ اللّٰهِ ؕ لَهٗ فِی الدُّنۡیَا خِزۡیٌ وَّنُذِیۡقُهٗ یَوۡمَ الۡقِیٰمَةِ عَذَابَ الۡحَرِیۡقِ ﴿۹﴾ ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتۡ یَدٰكَ وَاَنَّ اللّٰهَ لَیۡسَ بِظَلَّامٍ لِّلۡعَبِیۡدِ ﴿۱۰﴾

आयत 1

یٰۤاَیُّهَا النَّاسُ اتَّقُوۡا رَبَّكُمۡ ۚ اِنَّ زَلۡزَلَةَ السَّاعَةِ شَیۡءٌ عَظِیۡمٌ ﴿۱﴾

"ऐ लोगो! तक़वा इख़्तियार करो अपने रब का, यक़ीनन क़यामत का ज़लज़ला बहुत बड़ी चीज़ होगा।"

सूरतुल अम्बिया का इख्तताम "अल फ़ज़अ अल अकबर" (क़यामत की अज़ीम परेशानी) के तज़किरे पर हुआ था। अब सूरतुल हज का आग़ाज़ भी इसी कैफ़ियत के ज़िक्र से हो रहा है।

आयत 2

یَوۡمَ تَرَوۡنَهَا تَذۡهَلُ كُلُّ مُرۡضِعَةٍ عَمَّاۤ اَرۡضَعَتۡ

"जिस दिन तुम उसको देखोगे, उस दिन (हाल यह होगा कि) भूल जायेगी हर दूध पिलाने वाली जिसे वह दूध पिलाती थी"

माँ की ममता का जज़्बा ज़र्बुल मिस्ल (मिसाली) है। एक माँ अपनी जान को ख़तरे में डाल कर भी अपने बच्चे की हिफ़ाज़त करती है और उस पर किसी सूरत आँच नहीं आने देती। अपने बच्चे से मोहब्बत का यह जज़्बा हैवानों में भी इसी शिद्दत के साथ पाया जाता है। अलबत्ता क़यामत का दिन

ऐसा सख़्त होगा कि उसके खौफ़ व हरास के बाइस दूध पिलाने वाली माएँ, चाहे वो इंसान हों या हैवान, अपने दूध पीते बच्चों को भूल जायेंगी।

وَتَضَعُ كُلُّ ذَاتِ حَمْلٍ حَمْلَهَا

"और (दहशत का आलम यह होगा कि) हर हामिला का हम्ल गिर जायेगा"

وَتَرَى النَّاسَ سُكٰرٰى وَمَا هُمْ بِسُكٰرٰى وَلٰكِنَّ عَذَابَ اللّٰهِ شَدِيْدٌ ۝

"और तुम देखोगे लोगों को जैसे वो नशे में हों, हालाँकि वो नशे में नहीं होंगे, बल्कि अल्लाह का अज़ाब ही बहुत सख़्त है।"

वह घड़ी ऐसी खौफ़नाक होगी कि उसकी दहशत से लोग बेसुध पड़े नज़र आएँगे। बहरहाल हदीस में वाज़ेह तौर पर यह खुशख़बरी सुनाई गई है कि अल्लाह तआला अपने मोमिनीन सादिक़ीन बंदों को उस दिन की सख़्तियों से दूर रखेगें। اللهم ربنا اجعلنا منهم-

आयत 3

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُّجَادِلُ فِي اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَّيَتَّبِعُ كُلَّ شَيْطٰنٍ مَّرِيْدٍ ۝

"और लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं जो अल्लाह के बारे में झगड़ते हैं बग़ैर किसी इल्म के, और वो पैरवी कर रहे होते हैं हर सरकश शैतान की।"

आज के नाम निहाद मज़हबी स्कॉलर्ज़ और दानिश्वर भी इस आयत का मिस्दाक़ हैं, जो अमली तौर पर ग़ैर मुस्लिम मग़रबी तहज़ीब की नक्क़ाली करते नज़र आते हैं। यह लोग ज़हनी तौर पर मग़रबी इफ़कार व नज़रियात से मरऊब हैं और उन नज़रियात का हर तरीक़े से प्रचार करना अपना फ़र्ज़ समझते हैं। उनमें ऐसे लोग भी हैं जो हदीस की ज़रुरत व अहमियत के सिरे से मुन्किर हैं। उनकी रौशन ख़्याली उन्हें बावर कराती है कि क़ुरानी अहकाम सिर्फ़ एक ज़माने तक क़ाबिल-ए-क़बूल थे और इंसान के लिए हमेशा उनका पाबंद रहना मुमकिन नहीं। लिहाज़ा नए ज़माने की ज़रूरियात के मुताबिक़ क़ुरानी आयात को (मआज़ अल्लाह!) over rule करके इज्तिहाद करने की ज़रुरत है। डॉक्टर फ़ज़लुर्रहमान एक ऐसे ही पाकिस्तानी स्कॉलर थे जो McGill युनिर्वसिटी (मान्टरयाल, कनाडा) से फ़ारिगुल तहसील थे। उनका कहना था कि क़ुरान आँहुज़ूर ﷺ का कलाम भी हो सकता है और अल्लाह का भी। इसी क़बील के एक ईरानी स्कॉलर सैय्यद हुसैन नसर भी हैं। ऐसे लोग यहूदी इदारों से आला डिग्रियाँ हासिल करते हैं और फिर सारी उम्र यहूदियों से हक़-ए-वफ़ादारी निभाने में लगे रहते हैं। ऐसे लोगों की वाइट हाउस से भी ख़ुसूसी पज़ीराई और हौसला अफ़ज़ाई की जाती है।

आयत 4

كُتِبَ عَلَيْهِ اَنَّهٗ مَنْ تَوَلَّاهُ فَاَنَّهٗ يُضِلُّهٗ

"उस (शैतान) के बारे में तो लिख दिया गया है कि जो कोई भी उसकी दोस्ती इख़्तियार करेगा, वो उसे गुमराह करके रहेगा"

"और उसको पहुँचा कर रहेगा दोज़ख के अज़ाब तक।"

وَيَهْدِيهِ إِلَىٰ عَذَابِ السَّعِيرِ ۝٤

आयत 5

"ऐ लोगो! अगर तुम्हें दोबारा उठाये जाने के बारे में शक है तो (ज़रा ग़ौर करो कि) हमने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया"

يَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنْ كُنْتُمْ فِي رَيْبٍ مِنَ الْبَعْثِ فَإِنَّا خَلَقْنَاكُمْ مِنْ تُرَابٍ

इंसानी जिस्म की असल मिट्टी है। उसकी गिज़ा भी नबातात और मादनियात की शक्ल में मिट्टी ही से आती है। अगर वो किसी जानवर का गोश्त खाता है तो उसकी परवरिश भी मिट्टी से हासिल होने वाली गिज़ा से ही होती है।

"फिर नुत्फ़े से"

ثُمَّ مِنْ نُطْفَةٍ

और यह माद्दा भी उसी जिस्म की पैदावार है जो मिट्टी से बना और मिट्टी से फ़राहम होने वाली गिज़ा पर पला बढ़ा।

"फिर अ'लक़ा से"

ثُمَّ مِنْ عَلَقَةٍ

आमतौर पर "अ'लक़ा" का तर्जुमा "जमा हुआ ख़ून" किया जाता है जो दुरुस्त नहीं है। इस लफ्ज़ की वज़ाहत सूरतुल मोमिनून की आयत 14 के ज़िमन में आयेगी।

"फिर गोश्त के लोथड़े से, वाज़ेह शक्ल वाला और ग़ैर वाज़ेह शक्ल वाला"

ثُمَّ مِنْ مُضْغَةٍ مُخَلَّقَةٍ وَغَيْرِ مُخَلَّقَةٍ

पहले मरहले में इस लोथड़े पर किसी क़िस्म के कोई निशानात नहीं थे। फिर रफ्ता-रफ्ता मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर निशानात बनने लगे। बाज़ुओं और टाँगों की जगहों पर दो निशानात बने और इसी तरह दूसरे आज़ाअ के निशानात भी उभरना शुरु हुए।

"ताकि हम खोल-खोल कर बयान कर दें तुम्हारे लिए"

لِنُبَيِّنَ لَكُمْ ۚ

ताकि रहम-ए-मादर में इंसानी जनीन पर गुज़रने वाले मुख्तलिफ़ मराहिल के बारे में पूरी वज़ाहत के साथ तुम लोगों को बता दिया जाये। तआरुफ़े क़ुरान (बयानुल क़ुरान, जिल्द अव्वल) के बाब पंचम में इल्मे जनीन (Embryology) के माहिर साइंसदान कीथल मूर (कनाडा) का ज़िक्र गुज़र चुका है। इस मज़मून पर उस शख़्स की टेक्सट बुक्स दुनिया भर में मुस्तनद मानी जाती हैं और यूनिवर्सिटी की सतह तक पढ़ाई जाती हैं। उसका कहना है कि क़ुरान ने रहम-ए-मादर में जनीन के मुख़्तलिफ़ मराहिल को जिस तरह बयान किया है इस मौज़ू पर दस्तयाब मालूमात की इससे बेहतर ताबीर मुम्किन नहीं है। मज़ीद बराँ वह इस अम्र पर हैरत का इज़हार

भी करता है कि सदियों पहले क़ुरान में इन मराहिल का दुरुस्त तरीन तज़किरा क्योंकर मुम्किन हुआ।

وَنُقِرُّ فِي الْأَرْحَامِ مَا نَشَاءُ إِلَىٰ أَجَلٍ مُسَمًّى

"और हम ठहराए रखते हैं रहमों के अंदर जो हम चाहते हैं एक वक़्त मुअय्यन तक"

यानि रहम के अंदर हम्ल वैसा होता है जैसा अल्लाह तआला चाहता है। यह फ़ैसला सिर्फ़ वही करता है कि वह बच्चा मुज़क्कर होगा या मुअन्नस, ज़हीन व फ़तीन होगा या कुंद ज़हन, खूबसूरत होगा या बदसूरत, तंदरुस्त व सालिम होगा या बीमार व माज़ूर। इस मामले में किसी की ख्वाहिश या कोशिश का सिरे से कोई दख़ल नहीं होता। इस ज़िमन के बारे में सूरतुल मोमिनून के पहले रुकूअ में मज़ीद तफ़सील बयान होगी।

ثُمَّ نُخْرِجُكُمْ طِفْلًا ثُمَّ لِتَبْلُغُوا أَشُدَّكُمْ ۚ

"फिर हम निकालते हैं तुम्हें छोटे से बच्चे की सूरत में, फिर तुम पहुँचते हो अपनी जवानी को।"

وَمِنكُم مَّن يُتَوَفَّىٰ وَمِنكُم مَّن يُرَدُّ إِلَىٰ أَرْذَلِ الْعُمُرِ لِكَيْلَا يَعْلَمَ مِن بَعْدِ عِلْمٍ شَيْئًا ۚ

"और तुम में वो भी हैं जो पहले ही फ़ौत हो जाते हैं और वो भी हैं जो निकम्मी उम्र तक लौटाए जाते हैं, कि उसे कुछ भी इल्म ना रहे सब कुछ जानने के बाद।"

"أَرْذَلِ الْعُمُرِ" की कैफ़ियत के हुज़ूर ﷺ ने अल्लाह की पनाह माँगी है। बुढ़ापे में बाज़ औक़ात ऐसा मरहला भी आता है कि इंसान dementia का शिकार हो जाता है। इस हालत में उसकी ज़हनी सलाहियतें जवाब दे जाती हैं, याददाश्त ज़ायल हो जाती है और वही इंसान जो अपने आपको कभी सक़रात और बक़रात के बराबर समझता था, बच्चों की सी बातें करने लगता है। दुआ करनी चाहिए कि अल्लाह तआला इस कैफ़ियत को पहुँचने से पहले ही इस दुनिया से उठा ले। मैंने ज़ाती तौर पर मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब मरहूम को बुढ़ापे की इस कैफ़ियत में देखा है। आख़िरी उम्र में उनकी कैफ़ियत ऐसी थी कि ना ज़िन्दों में थे, ना मुर्दों में। देखने वाले के लिए मक़ामे इबरत था कि एक ऐसा शख़्स जो आला दर्जे का ख़तीब था और उसकी क़लम में बला का ज़ोर था, उम्र के इस हिस्से में बेचारगी व बेबसी की तस्वीर बन कर रह गया था और अपने पास बैठे लोगों को पहचानने से भी आजिज़ था। मैं उस ज़माने में उन्हें मिलने के लिए उनके पास जाता था मगर एक हसरत लेकर वापस आ जाता था।

मौलाना साहब की तफ़सीर "तदब्बुर-ए-क़ुरान" बिला शुबह बहुत आला पाये की तफ़सीर है। उसमें उन्होंने "निज़ामुल क़ुरान" के हवाले से अपने उस्ताद हमीदुद्दीन फ़राही रह. की फ़िक्र और उनके काम को आगे बढ़ाया है। मैंने ज़ाती तौर पर इस तफ़सीर से बहुत इस्तफ़ादह किया है, लेकिन मुझे मौलाना से बहुत सी बातों में इख़्तलाफ़ भी था। मैं समझता हूँ कि रज्म की सज़ा से मुताल्लिक़ राय देने में उनसे बहुत बड़ी ख़ता हुई है। (वज़ाहत के लिए मुलाहिज़ा हो सूरह अन्नूर, तशरीह आयत 2) अल्लाह तआला उन्हें माफ़ फ़रमाए। मौलाना का ज़िक्र हुआ है तो उनके लिए दुआ भी कीजिए:

اللّٰهُمَّ اغْفِرْلَہٗ وَارْحَمْہُ وَاَدْخِلْہُ فِی رَحْمَتِکَ وَحَاسِبْہُ حِسَاباً یَسِیْرًا۔ اَللّٰهُمَّ نَوِّرْ مَرْقَدَہٗ وَاَکْرِمْ مَنْزِلَہٗ وَالْحِقْہُ بِعِبَادِکَ الصَّالِحِین۔ آمین یا ربَّ العالَمین!

ज़ेरे नज़र आयत के अल्फ़ाज़ पर दोबारा ग़ौर करें। यहाँ इंसानी ज़िन्दगी का पूरा नक़्शा सामने रख कर बअसे बाद अलमौत के मुन्करीन को दावते फ़िक्र दी गई है कि हमारी क़ुदरत का मुशाहिदा करना चाहो तो तुम अपनी ज़िन्दगी और उसके मुख़्तलिफ़ मराहिल पर ग़ौर करो। देखो! तुम्हारी इब्तदा मिट्टी से हुई थी। उस मिट्टी से पैदा होकर तुम लोग किस-किस मंज़िल तक पहुँचते हो, और फिर आख़िर मर कर दोबारा मिट्टी में मिल जाते हो। जिस अल्लाह ने तुम्हें यह ज़िन्दगी बख़्शी, तुम्हें बेहतरीन सलाहियतों से नवाज़ा, जिसकी क़ुदरत से इंसानी ज़िन्दगी का यह पेचीदा निज़ाम चल रहा है, क्या तुम उसकी क़ुदरत और खल्लाक़ी के बारे में शक कर रहे हो कि वो तुम्हें दोबारा पैदा नहीं कर सकेगा। अपनी ज़िन्दगी की इस मिसाल से अगर हक़ीक़त तुम पर वाज़ेह नहीं हुई तो एक और मिसाल पर ग़ौर करो:

وَتَرَى الْاَرْضَ هَامِدَةً فَاِذَآ اَنْزَلْنَا عَلَيْهَا الْمَآءَ اهْتَزَّتْ وَرَبَتْ

"और तुम देखते हो ज़मीन को खुश्क (और वीरान), फिर जब हम उस पर पानी बरसाते हैं तो वो लहलाती है और उभरती है"

اهتزاز के मायने हरकत और जुन्बिश करने के हैं। इसी से लफ़्ज तَهتَزُّ सूरतुल नम्ल, आयत 10 और सूरतुल क़सस, आयत 31 में हज़रत मूसा अलै. के असा के बारे में आया है कि हज़रत मूसा अलै. ने जब अपना असा ज़मीन पर रखा तो उसमें हरकत पैदा हुई और वह साँप की तरह बल खाते हुए चलने लगा। चुनाँचे यहाँ "اهْتَزَّتْ" का मफ़हूम यह है कि बारिश के असरात से ज़मीन में ज़िन्दगी की लहर दौड़ गई, मुर्दा ज़मीन यकायक ज़िन्दा हो गई और उसमें हरकत पैदा हो गई। मुख़्तलिफ़ नबातात की अनगिनत कोंपलें जगह-जगह से ज़मीन को फाड़ कर बाहर निकलना शुरु हो गयीं और फिर वो सब्ज़ा लम्हा ब लम्हा नशोनुमा पाने लगा।

وَاَنْۢبَتَتْ مِنْ كُلِّ زَوْجٍۭ بَهِيْجٍ Ĉ

"और क़िस्म-क़िस्म की तरो-ताज़ा चीजें उगा देती है।"

नबातात की ज़िन्दगी का दौरानिया (cycle) बहुत मुख़्तसर होता है, इसलिए तुम अक्सर उसका मुशाहिदा करते हो। अपने इसी मुशाहिदे की रौशनी में तुम लोग अगर अपनी ज़िन्दगी के शबो-रोज़ का जायज़ा लोगे तो तुम्हें इंसानी और नबाताती ज़िन्दगी में गहरी मुशाबिहत नज़र आयेगी। मुर्दा ज़मीन में ज़िंदगी के आसार पैदा होने, नबातात के उगने, नशोनुमा पाने, फूलने-फलने और सूख कर फिर बेजान हो जाने का अमल गोया इंसानी ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ मराहिल मसलन पैदाईश, परवरिश, जवानी, बुढ़ापे और मौत ही का नक़्शा पेश करता है। इसमें सिर्फ़ दौरानिये का ही फ़र्क़ है। नबाताती ज़िन्दगी का दौरानिया चंद माह का है जबकि इंसानी ज़िन्दगी का दौरानिया अमूमन पचास, साठ, सत्तर या अस्सी साल पर मुश्तमिल है।

आयत 6

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ

"यह इसलिए है कि अल्लाह ही हक़ है"

अल्लाह तआला के हक़ होने में किसी शक व शुबह की कोई गुंजाईश नहीं।

وَاَنَّهٗ يُحْيِ الْمَوْتٰى وَاَنَّهٗ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝Č

"और यह कि वही मुर्दों को ज़िन्दा करता है (या करेगा) और यह कि वह हर चीज़ पर क़ादिर है।"

बारिश के पानी से मुर्दा ज़मीन के यकायक ज़िन्दा हो जाने का मंज़र तुम अपनी आँखों से देखते रहते हो। इसी तरह अल्लाह तआला एक दिन तुम लोगों को क़ब्रों से ज़िन्दा करके उठा खड़ा करेगा।

आयत 7

وَّاَنَّ السَّاعَةَ اٰتِيَةٌ لَّا رَيْبَ فِيْهَا ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ يَبْعَثُ مَنْ فِي الْقُبُوْرِ ۝Ċ

"और यह कि क़यामत आकर रहेगी, इसमें कोई शक नहीं, और यह कि अल्लाह उठायेगा उनको जो क़ब्रों में हैं।"

बअसे बाद अल मौत का यह वाक़िया लाज़िमन होकर रहेगा।

आयत 8

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُّجَادِلُ فِي اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَّلَا هُدًى وَّلَا كِتٰبٍ مُّنِيْرٍ ۝Ď

"और लोगों में से कोई ऐसा भी है जो अल्लाह के बारे में झगड़ता है, हालाँकि ना उसके पास इल्म है, ना कोई हिदायत है और ना कोई रौशन किताब है।"

ऐसे लोग बग़ैर किसी इल्मी दलील और इल्हामी रहनुमाई के अल्लाह तआला की ज़ात और सिफ़ात के बारे में बहस करते हैं।

आयत 9

ثَانِيَ عِطْفِهٖ لِيُضِلَّ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۭ

"(तकब्बुर से) अपनी करवट मोड़ कर (चल देता है) ताकि लोगों को अल्लाह के रास्ते से गुमराह करे।"

لَهٗ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَّنُذِيْقُهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَذَابَ الْحَرِيْقِ ۝Ḍ

"उसके लिए दुनिया में रुसवाई है, और क़यामत के दिन हम उसे जलाने वाले अज़ाब का मज़ा चखायेंगे।"

आयत 10

ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ يَدٰكَ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ۝10

"(और उसे कहा जायेगा कि) यह सब कुछ तेरे अपने हाथों के करतूतों की वजह से है,

और यह कि अल्लाह अपने बंदों पर ज़ुल्म करने वाला नहीं है।"

आयात 11 से 24 तक

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّعْبُدُ اللّٰهَ عَلٰي حَرْفٍ ۚ فَاِنْ اَصَابَهٗ خَيْرُۨ اطْمَاَنَّ بِهٖ ۚ وَاِنْ اَصَابَتْهُ فِتْنَةُۨ انْقَلَبَ عَلٰي وَجْهِهٖ ڗ خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ ۭ ذٰلِكَ هُوَ الْخُسْرَانُ
الْمُبِيْنُ ۝11 يَدْعُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَضُرُّهٗ وَمَا لَا يَنْفَعُهٗ ۭ ذٰلِكَ هُوَ الضَّلٰلُ الْبَعِيْدُ ۚ۝12 يَدْعُوْا لَمَنْ ضَرُّهٗٓ اَقْرَبُ مِنْ نَّفْعِهٖ ۭ لَبِئْسَ الْمَوْلٰى
وَلَبِئْسَ الْعَشِيْرُ ۝13 اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيْدُ ۝14 مَنْ كَانَ يَظُنُّ
اَنْ لَّنْ يَّنْصُرَهُ اللّٰهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ فَلْيَمْدُدْ بِسَبَبٍ اِلَى السَّمَاۗءِ ثُمَّ لْيَقْطَعْ فَلْيَنْظُرْ هَلْ يُذْهِبَنَّ كَيْدُهٗ مَا يَغِيْظُ ۝15 وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنٰهُ اٰيٰتٍۢ بَيِّنٰتٍ ۙ
وَّاَنَّ اللّٰهَ يَهْدِيْ مَنْ يُّرِيْدُ ۝16 اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـِٕيْنَ وَالنَّصٰرٰي وَالْمَجُوْسَ وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا ڰ اِنَّ اللّٰهَ يَفْصِلُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ
اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدٌ ۝17 اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَسْجُدُ لَهٗ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ وَالشَّمْسُ وَالْقَمَرُ وَالنُّجُوْمُ وَالْجِبَالُ وَالشَّجَرُ
وَالدَّوَاۗبُّ وَكَثِيْرٌ مِّنَ النَّاسِ ۭ وَكَثِيْرٌ حَقَّ عَلَيْهِ الْعَذَابُ ۭ وَمَنْ يُّهِنِ اللّٰهُ فَمَا لَهٗ مِنْ مُّكْرِمٍ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يَشَاۗءُ ۝18ڍ هٰذٰنِ خَصْمٰنِ اخْتَصَمُوْا
فِيْ رَبِّهِمْ ۡ فَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا قُطِّعَتْ لَهُمْ ثِيَابٌ مِّنْ نَّارٍ ۭ يُصَبُّ مِنْ فَوْقِ رُءُوْسِهِمُ الْحَمِيْمُ ۚ۝19 يُصْهَرُ بِهٖ مَا فِيْ بُطُوْنِهِمْ وَالْجُلُوْدُ ۭ۝20 وَلَهُمْ مَّقَامِعُ
مِنْ حَدِيْدٍ ۝21 كُلَّمَآ اَرَادُوْٓا اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا مِنْ غَمٍّ اُعِيْدُوْا فِيْهَا ۤ وَذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ۝22 اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ يُحَلَّوْنَ فِيْهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَّلُؤْلُؤًا ۭ وَلِبَاسُهُمْ فِيْهَا حَرِيْرٌ ۝23 وَهُدُوْٓا اِلَى الطَّيِّبِ مِنَ الْقَوْلِ ښ وَهُدُوْٓا اِلٰى
صِرَاطِ الْحَمِيْدِ ۝24

आयत 11

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّعْبُدُ اللّٰهَ عَلٰي حَرْفٍ ۚ

"और लोगों में से कोई वो भी है जो अल्लाह की इबादत करता है किनारे पर रह कर।"

इंसानी दिल के इस रोग की निशानदेही सूरतुल बक़रह की आयत 10 में इन अल्फ़ाज़ में की गई है: {فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ} "उनके दिलों में मर्ज़ है।" यह वो लोग हैं जो हक़ का साथ देना तो चाहते हैं, लेकिन उसके लिए अपनी जान जोखों में डालने को तैयार नहीं। वो गहरे पानी में जाने का ख़तरा मोल लेने के बजाय किनारे पर रहने को तरजीह देते हैं। मबादा कि इस सफ़र में कोई गज़न्द पहुँच जाये या कोई माली नुक़सान उठाना पड़ जाये। वो लोग बड़ी चालाकी के साथ इस क़िस्म के सब ख़तरात से खुद को महफ़ूज़ फ़ासले पर रख कर हक़ के साथ चलना चाहते हैं, लेकिन इस रास्ते मे ऐसा तर्ज़े अमल क़ाबिले क़ुबूल नहीं है। यह तो सरासर क़ुर्बानी का रास्ता है। इस रास्ते में अपनी जान और अपने माल को बचा-बचा कर रखने वाले फ़रज़ानों की नहीं बल्कि क़दम-क़दम पर क़ुर्बानियाँ देने वाले दीवानों की ज़रुरत है। इसी फ़लसफ़े को इक़बाल ने अपने इस शेर में बयान किया है:

तू बचा-बचा के ना रख इसे, तेरा आईना है वह आईना
कि शिकस्ता हो तो अज़ीज़तर है निगाहे आईना साज़ में!

ऐसे लोगों के मुक़ाबले में दूसरी तरफ़ कुछ वो लोग हैं जो हक़ को क़ुबूल करते ही यह नारा बुलंद करते हुए मझदार में कूद पड़ते हैं: "हरचे बादा बाद, मा कश्ती दर आब अंदा ख़तीम!" कि अब जो हो सो हो, हम तो हक़ की इस कश्ती में सवार होकर इसे दरिया में डाल चुके हैं। अब यह तैरेगी तो हम भी तैरेंगे और अगर इस रास्ते में हमारी जान भी चली जाये तो हम इस क़ुर्बानी के लिए भी तैयार हैं।

فَاِنْ اَصَابَهٗ خَيْرُۨ اطْمَاَنَّ بِهٖ ۚ

"तो अगर उसे कोई फ़ायदा पहुँचे तो उस पर मुत्मइन रहता है।"

وَاِنْ اَصَابَتْهُ فِتْنَةُۨ انْقَلَبَ عَلٰي وَجْهِهٖ ڗ

"और अगर उसे कोई आज़माईश आ जाये तो अपने मुँह के बल उल्टा फिर जाता है।"

ऐसे लोग मुवाफिक़ हालात में तो हर काम में अहले ईमान के साथ शरीक रहते हैं, लेकिन अगर कहीं अल्लाह की राह में निकलने का मरहला आ जाये या किसी और क़ुर्बानी का तक़ाज़ा हो तो चुपके से वापसी की राह ले लेते हैं।

خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ ؕ

"वो ख़सारे में रहा दुनिया में भी और आख़िरत में भी।"

ذٰلِكَ هُوَ الْخُسْرَانُ الْمُبِيْنُ ؕ—11

"यही तो खुला ख़सारा है।"

यह बहुत ही नुमायाँ और वाज़ेह तबाही है।

इस आयत में मुनाफ़िक़ाना किरदार का ज़िक्र है। इसी तरह इस सूरत में जिहाद का ज़िक्र भी मिलता है। मुनाफ़िक़त और जिहाद चूँकि मदनी सूरतों के मौज़ूआत हैं इसलिये सूरतुल हज को बाज़ मुफ़स्सरीन मदनी सूरत मानते हैं, लेकिन मेरे नज़दीक यह मक्की है। तफ़सीर तबरी में मन्क़ूल हबर अलामत हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास रज़ि. के क़ौल से इस ख़्याल की ताईद होती है कि इस सूरत की कुछ आयात (38 से 41) अस्ना-ए-सफ़र हिजरत में नाज़िल हुईं। चुनाँचे इन आयात को "बरज़खी आयात" कहना चाहिए। इसके अलावा सूरतुल हज को इस बिना पर भी मदनी समझा जाता है कि इसकी बाज़ आयात की सूरतुल बक़रह की बाज़ आयात के साथ गहरी मुशाबेहत पाई जाती है। मसलन सूरतुल बक़रह की आयत 143 और सूरतुल हज की आख़री आयत में "शहादत अलन्नास" का मज़मून बिल्कुल एक जैसे अल्फ़ाज़ में बयान हुआ है। इसी तरह ज़ेरे नज़र आयत में मुनाफ़िक़ीन की जो कैफ़ियत बयान की गई है वह उस कैफ़ियत से बहुत मुशाबेहत रखती है जिसका नक़्शा सूरतुल बक़रह के दूसरे रुकूअ में खींचा गया है कि जब बिजली चमकती है तो ये लोग कुछ चल-फिर लेते हैं लेकिन जब अंधेरा होता है तो खड़े के खड़े रह जाते हैं। बहरहाल मदीने में हुज़ूर ﷺ के सामने मुनाफ़िक़ीन का बिल्कुल वही हाल था जिसकी तस्वीर सूरतुल बक़रह की मज़कूरा तम्सील और ज़ेरे मुताअला आयत में दिखाई गई है। जब किसी जंग या किसी मुहिम का तक़ाज़ा ना होता तो यह लोग हुज़ूर ﷺ की महफ़िल में बाक़ायदगी से हाज़िर होते और बड़े-बड़े दावे करते, मगर ज्योंहि किसी क़ुर्बानी का मरहला आता तो गोया औंधे मुँह गिर पड़ते थे। दुआ करें कि अल्लाह हमें इस बीमारी से बचाए और इक़ामत दीन की जद्दो-जहद में पूरे ख़ुलूस के साथ हमातन और हमावजूद अपने आपको झोंक देने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। (आमीन या रब्बुल आलामीन!)

आयत 12

يَدْعُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَضُرُّهٗ وَمَا لَا يَنْفَعُهٗ ؕ

"वो पुकारता है अल्लाह के सिवा उनको जो ना उसे कोई ज़रर पहुँचा सकते हैं और ना ही नफ़ा दे सकते हैं।"

ذٰلِكَ هُوَ الضَّلٰلُ الْبَعِيْدُ ؕ﴿12﴾

"यही है बहुत दूर की गुमराही।"

आयत 13

يَدْعُوْا لَمَنْ ضَرُّهٗٓ اَقْرَبُ مِنْ نَّفْعِهٖ ؕ

"वो पुकारता है उसको जिसका ज़रर उसके नफ़े से क़रीबतर है।"

अगर कोई शख़्स अल्लाह के सिवा किसी और को मअबूद का दर्जा देकर पुकारेगा तो उसको कुछ नफ़ा तो मिलने वाला नहीं है, अलबत्ता उससे नुक़सान उसे बहरहाल मिल कर रहेगा।

لَبِئْسَ الْمَوْلٰى وَلَبِئْسَ الْعَشِيْرُ ــ13

"बहुत ही बुरा है वो मददगार और बहुत ही बुरा है वो रफ़ीक़।"

आयत 14

اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ؕ

"यक़ीन अल्लाह दाख़िल करेगा उन लोगों को जो ईमान लाये और जिन्होंने नेक अमल किए, उन बागों में जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी।"

اِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيْدُ ــ14

"यक़ीनन अल्लाह करता है जो चाहता है।"

उसके इख़्तियारात ग़ैर महदूद हैं। वो जो चाहे कर गुज़रता है।

आयत 15

مَنْ كَانَ يَظُنُّ اَنْ لَّنْ يَّنْصُرَهُ اللّٰهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ

"जिस शख़्स को यह गुमान हो कि अल्लाह हरगिज़ उसकी मदद नहीं करेगा दुनिया और आख़िरत में"

فَلْيَمْدُدْ بِسَبَبٍ اِلَى السَّمَآءِ ثُمَّ لْيَقْطَعْ

"तो उसे चाहिए कि वो एक रस्सी आसमान की तरफ़ ताने, फिर उसे काट दे"

فَلْيَنْظُرْ هَلْ يُذْهِبَنَّ كَيْدُهٗ مَا يَغِيْظُ ــ15

"फिर देखे कि क्या उसकी यह तदबीर उस चीज़ को दूर कर देती है जो उसे गुस्से में लाती है!"

यह आयत मुश्किलातुल क़ुरान में से है और मुख़्तलिफ़ मुफ़स्सरीन ने अपने-अपने अंदाज़ में इसकी ताबीर की है। मेरे नज़दीक "मौज़हल क़ुरान" में शाह अब्दुल क़ादिर देहलवी रज़ि. की ताबीर सबसे बेहतर है। उसकी वज़ाहत यह है कि एक ऐसा शख़्स जो पूरे इख्लास के साथ हमावक़्त दीन की ख़िदमत में मसरूफ़ है और उस रास्ते में आने वाली मुश्किलात का सामना करते हुए अल्लाह से मुसल्सल उम्मीद रखता है कि आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों अल्लाह की मदद ज़रूर आयेगी। लेकिन ख़ुदा ना ख्वास्ता किसी मरहले पर अगर वो अल्लाह की मदद से मायूस हो जाये तो उसकी यह कैफ़ियत उसके लिए नाकामी का बाइस बन जायेगी। चुनाँचे अल्लाह के रास्ते में जद्दो-जहद करने वालों "पेवस्ता रह शजर से उम्मीदे

बहार रख" के मिस्दाक़ कभी भी उम्मीद का दामन हाथ से नहीं छोड़ना चाहिए और अल्लाह की मदद से कभी मायूस नहीं होना चाहिए। सूरतुल ज़ुमर की आयत 53 में अल्लाह तआला का हुक्म है: {لَا تَقْنَطُوا مِنْ رَحْمَةِ اللهِ} कि तुम अल्लाह कि रहमत से मायूस ना हो जाओ। अगर किसी ख़ुशक़िस्मत इंसान को अल्लाह के रास्ते में जद्दो-जहद करने की सआदत नसीब हुई है तो उसे अल्लाह के इस हुक्म की तामील भी करनी चाहिए। उसे यह भी मालूम होना चाहिए कि अल्लाह के फ़ैसले उसकी अपनी माशियत के मुताबिक़ होते हैं और उसकी माशियत में बंदों का कोई अमल-दखल नहीं। बंदों को तो बस यह चाहिए कि वो अपने-अपने हिस्से की कोशिश करें और उसके वादों पर पुख्ता यक़ीन रखें। जैसे उसके बहुत से वादों में से एक ख़ुशकुन वादा यह भी है: {وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا} (अन्कबूत:69) "और जो लोग हमारी राह में जद्दो-जहद करेंगे, हम लाज़िमन उन्हें अपने रास्ते दिखायेंगें।" चुनाँचे दाईयाने हक़ को अल्लाह तआला के वादों पर यक़ीन रखते हुए उसके हुज़ूर यूँ इल्तजा करते रहना चाहिए: (आले इमरान:194) {إِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيعَادَ} "यक़ीनन तू अपने वादे के ख़िलाफ़ नहीं करता।" हमें यह अंदेशा तो नहीं है कि तू अपना वादा पूरा नहीं करेगा, बल्कि हमें यह फ़िक्र दामनगीर है कि हम तेरे वादों का मिस्दाक़ बनने में कामयाब होंगे या नहीं। उसके लिए जो शराइत मतलूब हैं वो शराइत हम पूरी कर भी सकेंगे या नहीं!

आयत ज़ेरे नज़र में यह नुक्ता समझाने के लिए एक शख़्स की मिसाल दी गई है जिसने अपने ऊपर एक रस्सी (अल्लाह की तरफ़ से उम्मीद) को थामा हुआ है। वो शख़्स अगर किसी मरहले पर मायूस होकर ख़ुद ही रस्सी को छोड़ देगा तो वो अपना ही नुक़सान करेगा। जैसे एक हदीस में क़ुरान को अल्लाह की रस्सी क़रार दिया गया है[7] ऐसे ही अल्लाह की उम्मीद भी एक मायनवी रस्सी है जो हमें अल्लाह के साथ वाबस्ता किए हुए है। जब तक यह रस्सी हमारे हाथ में रहेगी अल्लाह से हमारा ताल्लुक़ क़ायम रहेगा, और हमारे लिए एक सहारा मौजूद रहेगा। अगर हम इस रस्सी को काट देंगे यानि अल्लाह से अपनी उम्मीद मुन्क़तअ कर लेंगे तो इस मज़बूत सहारे को गोया ख़ुद ही अपने हाथ से छोड़ देंगे। ऐसा करने का नतीजा इसके सिवा और क्या निकलेगा कि हम बेयार-ओ-मददगार हो जायेंगे (ज़मीन पर औंधे मुँह गिर जायेंगे)। चुनाँचे इस आयत के पैग़ाम का खुलासा यह है कि अल्लाह की नुसरत की उम्मीद और उसके वादों पर यक़ीन रखो, यह तुम्हारे लिए बहुत मज़बूत सहारा है।

आयत 16

وَكَذَٰلِكَ أَنزَلْنَٰهُ ءَايَٰتٍۭ بَيِّنَٰتٍ وَأَنَّ ٱللَّهَ يَهْدِى مَن يُرِيدُ ــ16

"और इसी तरह हमने नाज़िल किया है इस (क़ुरान) को रौशन निशानियों की शक्ल में, और यह कि अल्लाह हिदायत देता है जिसको चाहता है।"

इसका दूसरा तर्जुमा यह भी है कि "अल्लाह हिदायत देता उसको जो (हिदायत हासिल करना) चाहता है।"

आयत 17

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـِٕيْنَ وَالنَّصٰرٰي وَالْمَجُوْسَ وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْٓا ڰ

"यक़ीनन वो लोग जो (मुहम्मद ﷺ पर) ईमान लाये हैं और जो यहूदी, मजूसी और ईसाई हैं, और जिन लोगों ने शिर्क की रविश इख़्तियार की है"

اِنَّ اللّٰهَ يَفْصِلُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدٌ ؀17

"यक़ीनन अल्लाह फ़ैसला करेगा उनके माबैन (दरमियान) क़यामत के दिन। यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ पर गवाह है।"

यानि हर चीज़ और हर इंसान के दिल की कैफ़ियत उसकी निगाहों के सामने है।

आयत 18

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَسْجُدُ لَهٗ مَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ

"क्या तुमने देखा नहीं कि अल्लाह के सामने सर-ब-सजूद हैं जो आसमानों में हैं और जो ज़मीन में हैं"

وَالشَّمْسُ وَالْقَمَرُ وَالنُّجُوْمُ وَالْجِبَالُ وَالشَّجَرُ وَالدَّوَاۗبُّ وَكَثِيْرٌ مِّنَ النَّاسِ ۭ

"और सूरज, चाँद, सितारे, पहाड़, दरख़्त और चौपाये और लोगों में से भी बहुत सारे।"

इंसानों के अलावा बाक़ी तमाम मख्लूक़ात क़ानूने खुदावन्दी और तकवीनी निज़ाम के उसूल व ज़वाबित की पाबंद और हर लम्हा अल्लाह तआला की इताअत व बन्दगी में मसरूफ़े अमल हैं, अलबत्ता इस सिलसिले में इंसानों का मामला मुख्तलिफ़ है। वो सबके सब एक से नहीं हैं। इंसानों को जो महदूद आज़ादी मिली है उससे फ़ायदा उठा कर कुछ लोग अल्लाह से बगावत कर देते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो अल्लाह को छोड़ कर दूसरी चीज़ों मसलन सूरज, चाँद और दरख़्तों तक की परस्तिश शुरु कर देते हैं। बहरहाल अल्लाह तआला जिन लोगों को हिदायत और अपनी मअरफ़त अता फ़रमाता है वो सिर्फ़ उसी के सामने सर-ब-सजूद होते हैं।

وَكَثِيْرٌ حَقَّ عَلَيْهِ الْعَذَابُ ۭ

"और बहुत से (इंसान) ऐसे हैं जो अज़ाब के मुस्तहिक़ हो जाते हैं।"

وَمَنْ يُّهِنِ اللّٰهُ فَمَا لَهٗ مِنْ مُّكْرِمٍ ۭ

"और जिसको अल्लाह ही रुसवा कर दे फिर उसे इज़्ज़त देने वाला कोई नहीं।"

अल्लाह ने तो इंसान को "खलीफ़ातुल्लाह फ़िल अर्द" का मक़ाम अता किया था, उसे मस्जूदे मलाइक बनाया था। अब अगर कोई इंसान अपने आपको ख़ुद ही इस मक़ामे रफ़ीअ से नीचे गिरा दे और मख्लूक़ के सामने अपना सर झुका कर ख़ुद को ज़लील व रुसवा कर ले तो उसे तकरीम इंसानी क्योंकर हासिल होगी!

"यक़ीनन अल्लाह करता है जो चाहता है।" إِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يَشَاءُ ـــ18

इस आयत के अंदर मुख़्तलिफ़ चीज़ों के तज़किरे में ऊपर से नीचे की तरफ़ एक ख़ूबसूरत तरतीब व तदरीज पाई जाती है। सूरज सबसे बड़ा है, उसके बाद चाँद, उसके बाद सितारे जो बज़ाहिर चाँद से छोटे नज़र आते हैं। फिर ज़मीन पर पहाड़ सबसे बुलंद हैं, फिर दरख़्त फिर चौपाये और आखिर पर इंसान।

आयत 19

"यह दो गिरोह हैं जो अपने रब के बारे में झगड़ रहे हैं।" هَٰذَانِ خَصْمَانِ اخْتَصَمُوا فِي رَبِّهِمْ

यह सूरत चूँकि रसूल अल्लाह ﷺ की मक्की ज़िन्दगी के आखरी दौर में नाज़िल हुई थी, इसलिये इन गिरोहों से मक्का के दो गिरोह मुराद हैं। यानि एक मोमिनीन का गिरोह जो हुज़ूर ﷺ पर ईमान ला चुका था और दूसरा वह गिरोह जो अब तक आप ﷺ की मुख़ालफ़त पर अड़ा हुआ था। (क़ब्ल अज़ें आयत 11 के ज़िमन में वज़ाहत की जा चुकी है कि सूरतुल हज मक्की सूरत है, अलबत्ता इसकी कुछ आयात ऐसी हैं जो सफ़र-ए-हिजरत के दौरान नाज़िल हुई थीं।)

"तो जो लोग इंकार कर रहे हैं उनके लिए आग के कपड़े क़तअ किए जायेंगे।" فَالَّذِينَ كَفَرُوا قُطِّعَتْ لَهُمْ ثِيَابٌ مِّن نَّارٍ

कपड़े को क़तअ करने का ज़िक्र करके लिबास तैयार करने के अमल की तरफ़ इशारा करना मक़सूद है। यानि जिस तरह दर्ज़ी पहले मतलूबा नाप के मुताबिक़ कपड़े को काटता है और फिर लिबास तैयार करता है उसी तरह मुन्करीने हक़ के लिए जहन्नम की आग से लिबास तैयार किये जायेंगे।

"उनके सरों पर खौलता हुआ पानी बहाया जायेगा।" يُصَبُّ مِن فَوْقِ رُءُوسِهِمُ الْحَمِيمُ ـــ19

आयत 20

"उससे जो कुछ उनके पेटों के अंदर है सब गल जायेगा और उनकी खालें भी।" يُصْهَرُ بِهِ مَا فِي بُطُونِهِمْ وَالْجُلُودُ ـــ20

आयत 21

"और उन (की सरकोबी) के लिए लोहे के हथौड़े होंगे।" وَلَهُم مَّقَامِعُ مِنْ حَدِيدٍ ـــ21

आयत 22

"जब भी वो चाहेंगे कि उसमें से निकल जायें ग़म के मारे, तो उन्हें उसी में वापस लौटा दिया जायेगा।"

كُلَّمَآ اَرَادُوْٓا اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا مِنْ غَمٍّ اُعِيْدُوْا فِيْهَا ۔

"और (उनसे कहा जायेगा कि) चखो अब मज़ा इस जलाने वाले अज़ाब का।"

وَذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ۔ــ22

अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के इंकार की पादाश में अब यह अज़ाब हमेशा के लिए तुम्हारा मुक़द्दर है। अब तुमने इसी में रहना है। मुन्करीन के अन्जाम का ज़िक्र करने के बाद अब दूसरे गिरोह यानि अहले ईमान का ज़िक्र किया जा रहा है।

आयत 23

"यक़ीनन अल्लाह दाख़िल करेगा उन लोगों को जो ईमान लाये और जिन्होने नेक आमाल किये ऐसे बाग़ात में जिनके नीचे नहरें बहती होंगी"

اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ

"पहनाये जायेंगे उस (जन्नत) में उन्हें सोने के कंगन और मोती, और उसमें उनका लिबास रेशम का होगा।"

يُحَلَّوْنَ فِيْهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَّلُؤْلُؤًا ۚ وَلِبَاسُهُمْ فِيْهَا حَرِيْرٌ ــ23

दुनिया में रेशम पहनना मर्दों के लिए हराम है मगर जन्नतियों के लिबास ख़ुसूसी तौर पर रेशम से तैयार किए जायेंगे। और ऊपर वाला लिबास बारीक रेशम का होगा जबकि उसके नीचे गाढ़े रेशम का।

आयत 24

"और उनकी रहनुमाई कर दी गई है बेहतरीन बात की तरफ़।"

وَهُدُوْٓا اِلَى الطَّيِّبِ مِنَ الْقَوْلِ ۪

यहाँ बेहतरीन बात से मुराद कलमा-ए-तैय्यब: لَاۤاِلٰهَ الاَّ اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰهِ हो सकता है या फिर यह कलमा: سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَا اِلٰهَ الاَّ اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ وَلَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ الاَّ بِاللّٰهِ

"और उनकी रहनुमाई कर दी गई है अल हमीद (अल्लाह) की राह की तरफ़।"

وَهُدُوْٓا اِلٰى صِرَاطِ الْحَمِيْدِ ــ24

उन्हें अल्लाह तआला के रास्ते की हिदायत दी गई है जो सब तारीफ़ों के लायक़ है और वो उस रास्ते पर चलते हुए अल्लाह तआला की रहमत {فَرَوْحٌ وَّرَيْحَانٌ ۙ وَّجَنَّتُ نَعِيْمٍ} (अल् वाक़िया:89) के अंदर पहुँच जायेंगे।

आयात 25 से 33 तक

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ الَّذِيْ جَعَلْنٰهُ لِلنَّاسِ سَوَاۗءَۨ الْعَاكِفُ فِيْهِ وَالْبَادِ ۭ وَمَنْ يُّرِدْ فِيْهِ بِاِلْحَادٍۢ بِظُلْمٍ نُّذِقْهُ مِنْ
عَذَابٍ اَلِيْمٍ ؀25 وَاِذْ بَوَّاْنَا لِاِبْرٰهِيْمَ مَكَانَ الْبَيْتِ اَنْ لَّا تُشْرِكْ بِيْ شَيْــــًٔا وَّطَهِّرْ بَيْتِيَ لِلطَّاۗىِٕفِيْنَ وَالْقَاۗىِٕمِيْنَ وَالرُّكَّعِ السُّجُوْدِ ؀26 وَاَذِّنْ فِي النَّاسِ
بِالْحَجِّ يَاْتُوْكَ رِجَالًا وَّعَلٰي كُلِّ ضَامِرٍ يَّاْتِيْنَ مِنْ كُلِّ فَجٍّ عَمِيْقٍ ؀27ۙ لِّيَشْهَدُوْا مَنَافِعَ لَهُمْ وَيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ فِيْٓ اَيَّامٍ مَّعْلُوْمٰتٍ عَلٰي مَا رَزَقَهُمْ مِّنْۢ
بَهِيْمَةِ الْاَنْعَامِ ۚ فَكُلُوْا مِنْهَا وَاَطْعِمُوا الْبَاۗىِٕسَ الْفَقِيْرَ ؀28ۡ ثُمَّ لْيَقْضُوْا تَفَثَهُمْ وَلْيُوْفُوْا نُذُوْرَهُمْ وَلْيَطَّوَّفُوْا بِالْبَيْتِ الْعَتِيْقِ ؀29 ذٰلِكَ ۤ وَمَنْ يُّعَظِّمْ
حُرُمٰتِ اللّٰهِ فَهُوَ خَيْرٌ لَّهٗ عِنْدَ رَبِّهٖ ۭ وَاُحِلَّتْ لَكُمُ الْاَنْعَامُ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْاَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوْا قَوْلَ الزُّوْرِ ؀30ۙ حُنَفَاۗءَ لِلّٰهِ
غَيْرَ مُشْرِكِيْنَ بِهٖ ۭ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَكَاَنَّمَا خَرَّ مِنَ السَّمَاۗءِ فَتَخْطَفُهُ الطَّيْرُ اَوْ تَهْوِيْ بِهِ الرِّيْحُ فِيْ مَكَانٍ سَحِيْقٍ ؀31 ذٰلِكَ ۤ وَمَنْ يُّعَظِّمْ شَعَاۗىِٕرَ اللّٰهِ
فَاِنَّهَا مِنْ تَقْوَي الْقُلُوْبِ ؀32 لَكُمْ فِيْهَا مَنَافِعُ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى ثُمَّ مَحِلُّهَآ اِلَى الْبَيْتِ الْعَتِيْقِ؀33

यह दो रुकूअ मनासिके हज के बारे में हैं। सूरतुल बक़रह के चौबीसवें और पच्चीसवें रुकूअ में भी मनासिके हज का तज़किरा है मगर वहाँ पर क़ुर्बानी का ज़िक्र नहीं हुआ। सिर्फ़ क़ब्ल अज़ वक़्त सिर मुँडवाने की सूरत में कफ्फ़ारे के तौर पर जानवर ज़िबह करने (दमे जनायत) और हज व उमरा को जमा करने (क़िरान या तमत्तौअ) की सूरत में दमे शुक्र का तज़किरा है। लेकिन यहाँ क़ुर्बानी और तवाफ़ का ख़ास तौर पर ज़िक्र है।

आयत 25

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

"यक़ीनन वो लोग जिन्होंने कुफ़्र किया और वो रोकते हैं लोगों को अल्लाह के रास्ते से और मस्जिदे हराम से"

कुफ्फ़ारे मक्का की मुख़ालफ़ाना सरगर्मियों की तरफ़ इशारा है जिनके बाइस मुसलमान ना सिर्फ़ जवारे बैतुल्लाह को छोड़ने पर मजबूर हुए बल्कि एक अरसे तक हज व उमरे की सआदत हासिल करने से महरूम भी रहे।

الَّذِيْ جَعَلْنٰهُ لِلنَّاسِ سَوَاۗءَۨ الْعَاكِفُ فِيْهِ وَالْبَادِ ۭ

"जिसको हमने सब लोगों के लिए मसावी क़रार दिया है, ख़्वाह उसमें मुक़ीम हों या बाहर से आने वाले।"

इन दोनों अक़साम के लोगों के लिए "मुक़ीम" और "आफ़ाक़ी" की इस्तलाहात इस्तेमाल होती हैं। चुनाँचे मुक़ीम हो या आफ़ाक़ी हरम के अंदर सबके हुक़ूक़ बराबर हैं, किसी को किसी पर तरजीह या बरतरी नहीं दी जा सकती। अब भी वहाँ पर यह मसावात बरक़रार है। बाहर से आने वाला कोई शख़्स पहली सफ़ में बैठा हो तो उसे कोई वहाँ से नहीं उठा सकता। अलबत्ता कोई नाजायज़ तरीक़े से अपने लिए कोई रिआयत हासिल करले या हुकूमती सतह पर किसी को वी.आई.पी. क़रार देकर दूसरों के हुक़ूक़ मुतास्सिर किए जायें तो यह अलग बात है।

وَمَنْ يُّرِدْ فِيْهِ بِاِلْحَادٍۢ بِظُلْمٍ

"और जो कोई इरादा करे उसमें किसी टेढ़ी राह का ज़ुल्म के साथ"

बैतुल्लाह के अंदर जो कोई अपनी शरारते नफ़्स की बिना पर या ज़ुल्म व नाइंसाफ़ी की रविश पर चलते हुए किसी बेदीनी के इरतकाब, कोई कजी पैदा करने या लोगों को सीधे रास्ते से हटाने की कोशिश करेगा:

نُّذِقْهُ مِنْ عَذَابٍ اَلِيْمٍ ؀25

"उसे हम मज़ा चखायेंगे दर्दनाक अज़ाब का।"

आयत 26

وَاِذۡ بَوَّاۡنَا لِاِبۡرٰهِيۡمَ مَكَانَ الۡبَيۡتِ

"और जब हमने मुअय्यन कर दी इब्राहीम के लिए अपने इस घर की जगह"

हज़रत इब्राहीम अलै. के लिए निशानदेही कर दी गई कि ठीक इस जगह पर बैतुल्लाह की तामीर की जाये। गालिबन यह वही जगह थी जहाँ हज़रत आदम अलै. ने बैतुल्लाह की तामीर की थी। बाद में सैलाब की वजह से हज़रत आदम अलै. की तामीरशुदा दीवारें गिर गयीं और उनके आसार भी नापैद हो गये लेकिन ज़मीन के अंदर बुनियादें मौजूद थीं।

اَنۡ لَّا تُشۡرِكۡ بِىۡ شَيۡـئًا وَّطَهِّرۡ بَيۡتِىَ لِلطَّآئِفِيۡنَ وَالۡقَآئِمِيۡنَ وَالرُّكَّعِ السُّجُوۡدِ ــ26

"(और हुक्म दिया) कि मेरे साथ किसी चीज़ को शरीक ना करना, और मेरे इस घर को पाक रखना तवाफ़ करने वालों के लिए और क़याम, रुकूअ और सज्दा करने वालों के लिए।"

यही मज़मून सूरतुल बक़रह की इस आयत (नम्बर 125) में भी आ चुका है: {وَعَهِدۡنَاۤ اِلٰٓى اِبۡرٰهٖمَ وَاِسۡمٰعِيۡلَ اَنۡ طَهِّرَا بَيۡتِىَ لِلطَّآئِفِيۡنَ وَالۡعٰكِفِيۡنَ وَالرُّكَّعِ السُّجُوۡدِ} "और अहद लिया हमने इब्राहीम और इस्माईल अलै. से कि पाक रखें मेरे घर को तवाफ़ करने वालों, ऐतकाफ़ करने वालों और रुकूअ व सुजूद करने वालों के लिए।" दोनों आयात के अल्फ़ाज़ भी मिलते-जुलते हैं, सिर्फ यह फ़र्क़ है कि सूरतुल बक़रह में लफ्ज़ "الۡعٰكِفِيۡنَ" आया है और आयत ज़ेरे नज़र में उसकी जगह "الۡقَآئِمِيۡنَ" इस्तेमाल हुआ है।

आयत 27

وَاَذِّنۡ فِى النَّاسِ بِالۡحَجِّ

"और लोगों में हज की मुनादी कर दो"

इस हुक्म के बाद हज़रत इब्राहीम अलै. ने कैसे ऐलान किया होगा, किस तरह लोगों को पुकारा होगा और अल्लाह तआला ने उनके उस पैग़ाम और पुकार को कहाँ-कहाँ तक पहुँचाया होगा, यह मामला अल्लाह और उनके दरमियान है।

يَّاۡتُوۡكَ رِجَالًا وَّعَلٰى كُلِّ ضَامِرٍ يَّاۡتِيۡنَ مِنۡ كُلِّ فَجٍّ عَمِيۡقٍ ۙ ــ27

"आयेंगे आपके पास लोग पैदल भी और बड़ी लागर ऊँटनियों पर भी, जो पहुँचेंगी दूरदराज़ गहरी वादियो में से होकर।"

पहाड़ो के दरमियान के रास्ते को "फज्ज" कहते हैं। उससे मक्के की मज़ाफ़ाती वादियों और घाटियों की तरफ इशारा है कि आपकी इस दावत पर लब्बैक कहते हुए दूर व नज़दीक से लोग आयेंगे। उनमें पैदल भी होंगे और सवार भी। वो दूर व नज़दीक के गहरे पहाड़ी रास्तों को अबूर करते हुए यहाँ पहुँचेंगे। लागर ऊँटनियों के ज़िक्र से दूरदराज़ के सफ़र मुराद हैं कि तवील सफ़र की वजह से उनकी उँटनियाँ लागर हो चुकी होंगी।

आयत 28

لِّيَشْهَدُوا مَنَافِعَ لَهُمْ

"ताकि वो हाजिर हों अपनी मन्फ़अत की जगहों पर"

وَيَذْكُرُوا اسْمَ اللَّهِ فِي أَيَّامٍ مَّعْلُومَاتٍ عَلَىٰ مَا رَزَقَهُم مِّن بَهِيمَةِ الْأَنْعَامِ ۖ

"और अल्लाह का नाम लें मुअय्यन दिनों में उन मवेशियों पर जो उसने उन्हें अता किये हैं।"

أَيَّامٍ مَّعْلُومَاتٍ से मुराद क़ुर्बानी (10, 11 और 12 ज़िल हिज्जा) के दिन हैं। यानि अय्यामे नहर में वो लोग अल्लाह का नाम लेकर जानवर ज़िबह करें।

فَكُلُوا مِنْهَا وَأَطْعِمُوا الْبَائِسَ الْفَقِيرَ ۖ 28

"तो उसमें से ख़ुद भी खाओ और ख़स्ताहाल मोहताजों को भी खिलाओ।"

आयत 29

ثُمَّ لْيَقْضُوا تَفَثَهُمْ

"फिर चाहिए कि वो दूर करें अपने मैल-कुचैल"

इससे अहराम खोल कर नहाना-धोना मुराद है। हज करने वालों के लिए 10 ज़िल हिज्जा के दिन चार अफ़आल (काम) ज़रुरी हैं, यानि रमी, नहर, हलक़ और तवाफ़। नहर और हलक़ के बाद अहराम खोलो, फिर नहा-धोकर साफ़ लिबास पहनो और तवाफ़े ज़ियारत के लिए जाओ।

وَلْيُوفُوا نُذُورَهُمْ وَلْيَطَّوَّفُوا بِالْبَيْتِ الْعَتِيقِ ۔29

"और अपनी नज़रें पूरी करें और इस क़दीम घर का तवाफ़ करें।"

आयत 30

ذَٰلِكَ ۖ وَمَن يُعَظِّمْ حُرُمَاتِ اللَّهِ فَهُوَ خَيْرٌ لَّهُ عِندَ رَبِّهِ ۗ

"यह सुन चुके! और जो कोई ताज़ीम करे अल्लाह की हुरमतों की तो वो उसके लिए बेहतर है उसके रब के नज़दीक।"

अल्लाह ने जिस-जिस चीज़ को मोहतरम ठहराया है वो सब "हुरमातुल्लाह" हैं। इसमें ख़ुद बैतुल्लाह और हुरमत वाले महीने भी शामिल हैं। फिर जैसा कि सूरतुल मायदा (आयत 2) में हम पढ़ चुके हैं कि क़ुर्बानी के जानवर जिनकी गर्दनों में क़लादे डाले गये हों वो भी और ख़ुद आज़मीने हज: {آمِّينَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ} भी मोहतरम हैं। यह सब हुरमातुल्लाह हैं और इन सबकी ताज़ीम लाज़मी है।

وَأُحِلَّتْ لَكُمُ الْأَنْعَامُ إِلَّا مَا يُتْلَىٰ عَلَيْكُمْ

"और हलाल कर दिए गये तुम्हारे लिए तमाम चौपाए सिवाय उसके जो तुम्हें पढ़ कर सुना दिया गया है"

यानि ख़ंज़ीर के बारे में वाज़ेह तौर पर बता दिया गया कि वो हराम है। बाक़ी बकरी, भेड़, गाय, ऊँट वगैरह की क़ुर्बानी दी जा सकती है।

فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْأَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوا قَوْلَ الزُّورِ ۙ—30

"तो तुम बचो बुतों की गंदगी से और बचो झूठ बात से।"

यानि शिर्क से बचना तुम्हारी पहली तरजीह होनी चाहिए। मक्के में उस वक़्त बुतपरस्ती आम थी जो शिर्क की बद्तरीन शक्ल है।

आयत 31

حُنَفَاءَ لِلَّهِ غَيْرَ مُشْرِكِينَ بِهِ ۚ

"यक्सू हो जाओ अल्लाह के लिए, उसके साथ किसी को शरीक ना करते हुए।"

अल्लाह की बंदगी में किसी ऐतबार और किसी पहलु से शिर्क का शायबा तक ना आने पाये। ना ज़ात में, ना सिफ़ात में, न हुक़ूक़ में ना इख़्तियारात में।

وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَكَأَنَّمَا خَرَّ مِنَ السَّمَاءِ

"और जो कोई अल्लाह के साथ शिर्क करेगा तो वो ऐसे है जैसे आसमान से गिर पड़ा"

शिर्क करने वाले इन्सान की मिसाल ऐसे है जैसे वो किसी बुलंदी पर रस्सी की मदद से लटका हुआ था तो उसकी रस्सी कट गई और वो यकदम तेज़ी से नीचे आ रहा है।

فَتَخْطَفُهُ الطَّيْرُ أَوْ تَهْوِي بِهِ الرِّيحُ فِي مَكَانٍ سَحِيقٍ —31

"तो उसे परिंदे उचक लें या हवा उड़ा फेंके किसी दूरदराज़ जगह पर।"

तो ऐसे शख़्स की अब कैफ़ियत यह है या तो वो बाज़ और उक़ाब जैसे शिकारी परिंदो के रहमो-करम पर होगा या फिर तेज़ हवा का कोई झोंका उसे किसी खाई में पटख़ देगा। मुशरिक का ऐसा अंजाम इसलिए होता है कि अल्लाह का दामन छोड़ कर वो बेसहारा हो जाता है, जबकि तौहीद परस्त शख़्स एक मज़बूत सहारे पर क़ायम होता है। जैसा कि सूरह इब्राहीम में फ़रमाया गया है: {يُثَبِّتُ اللَّهُ الَّذِينَ آمَنُوا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَفِي الْآخِرَةِ} (आयत 27) "साबित क़दम रखता है अल्लाह अहले ईमान को क़ौले साबित (कलमा-ए-तौहीद) के साथ दुनिया की ज़िन्दगी में भी और आख़िरत में भी।"

आयत 32

ذَٰلِكَ ۖ وَمَنْ يُعَظِّمْ شَعَائِرَ اللَّهِ فَإِنَّهَا مِنْ تَقْوَى الْقُلُوبِ —32

"यह सब कुछ (तुमने सुन लिया), और जो अल्लाह के शआइर की ताज़ीम करेगा तो यक़ीनन यह दिलों के तक़वा की बात हैं।"

शआइर की वाहिद "शईरह" है। लुग्वी ऐतबार से इस लफ़्ज़ का ताल्लुक़ "शऊर" से है। इस मफ़हूम में हर वो चीज़ "शआइरुल्लाह" में से है जिसके हवाले से अल्लाह की ज़ात, उसकी सिफ़ात और उसकी बंदगी का शऊर इंसान के दिल में पैदा हुआ। इस हवाले से सूरतुल बक़रह में सफ़ा और मरवा को भी शआइरुल्लाह कहा गया है: {إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِنْ شَعَائِرِ اللَّهِ ۖ} (आयत 158) चुनाँचे

ख़ुद बैतुल्लाह, मक़ामे इब्राहीम, सफ़ा और मरवा सब शआइरुल्लाह में शामिल हैं।

आयत 33

لَكُمْ فِيْهَا مَنَافِعُ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى

"तुम्हारे लिए इन (क़ुर्बानी के जानवरों) में नफ़ा है एक वक़्ते मुअय्यन तक"

यानि क़ुर्बानी के जानवरों से फ़ायदा उठाने की इजाज़त है। मसलन उन पर सवारी की जा सकती है, उनके ऊन वग़ैरह को इस्तेमाल में लाया जा सकता है, दूध पिया जा सकता है और इस तरह के दूसरे फ़ायदे भी हासिल किए जा सकते हैं।

ثُمَّ مَحِلُّهَآ اِلَى الْبَيْتِ الْعَتِيْقِ ــ33

"फिर उनकी असल मंज़िल यह क़दीम घर ही है।"

यानि फिर क़ुर्बानी के दिन इन जानवरों को ले जाकर बैतुल्लाह में पेश करना है। असल "मन्हर" (क़ुर्बानगाह) तो बैतुल्लाह ही है, मगर उसे मिना तक वुसअत दे दी गई है। पुराने ज़माने में क़ुर्बानगाह मरवा की पहाड़ी के पास हुआ करती थी और मिना के जिस इलाक़े में आज-कल क़ुर्बानी की जाती है वो भी दरअसल इसी वादी में शामिल है जो मरवा से शुरु होती है।

आयात 34 से 37 तक

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا لِّيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلٰي مَا رَزَقَهُمْ مِّنْۢ بَهِيْمَةِ الْاَنْعَامِ ۭ فَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ فَلَهٗٓ اَسْلِمُوْا ۭ وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِيْنَ ۙــ34 الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ وَالصّٰبِرِيْنَ عَلٰي مَآ اَصَابَهُمْ وَالْمُقِيْمِي الصَّلٰوةِ ۙ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ــ35 وَالْبُدْنَ جَعَلْنٰهَا لَكُمْ مِّنْ شَعَاۗىِٕرِ اللّٰهِ لَكُمْ فِيْهَا خَيْرٌ ۡ فَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا صَوَاۗفَّ ۚ فَاِذَا وَجَبَتْ جُنُوْبُهَا فَكُلُوْا مِنْهَا وَاَطْعِمُوا الْقَانِعَ وَالْمُعْتَرَّ ۭ كَذٰلِكَ سَخَّرْنٰهَا لَكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ــ36 لَنْ يَّنَالَ اللّٰهَ لُحُوْمُهَا وَلَا دِمَاۗؤُهَا وَلٰكِنْ يَّنَالُهُ التَّقْوٰي مِنْكُمْ ۭ كَذٰلِكَ سَخَّرَهَا لَكُمْ لِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰي مَا هَدٰىكُمْ ۭ وَبَشِّرِ الْمُحْسِنِيْنَ ــ37

आयात 34

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا لِّيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلٰي مَا رَزَقَهُمْ مِّنْۢ بَهِيْمَةِ الْاَنْعَامِ ۭ

"और हर उम्मत के लिए हमने क़ुर्बानी का एक निज़ाम मुक़र्रर किया है ताकि वो अल्लाह का नाम लिया करें उन मवेशियों पर जो उसने उन्हें अता किए हैं।"

فَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ فَلَهٗٓ اَسْلِمُوْا ۭ

"तो (जान लो कि) तुम्हारा मअबूद एक ही मअबूद है, तो तुम उसी के सामने सरे तस्लीम ख़म करो।"

उसके हर हुक्म को तस्लीम करो और उसकी मुकम्मल इताअत क़ुबूल करो। ऐसा ना हो कि एक तरफ़ तो क़ुर्बानी दी जा रही हो और दूसरी तरफ़ हरामखोरी भी जारी हो। हराम के माल से ही क़ुर्बानी के जानवर खरीदे जायें और फिर फोटो बनवा कर अख़बारों में ख़बरें लगवाई जायें। यह सब कुछ अल्लाह के यहाँ क़ाबिले क़ुबूल नहीं है। उसी को मअबूद मानना है तो फिर उसकी मुकम्मल इताअत क़ुबूल करो और उसकी हराम करदा चीज़ों में मुँह ना मारो।

وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِيْنَ ۙ—34

"और (ऐ नबी ﷺ!) बशारत दे दीजिए आजिज़ी इख़्तियार करने वालों को।"

"इख्बात" के मायने अपने आपको पस्त करने और तवाज़अ व इंकसारी इख़्तियार करने के हैं।

आयत 35

الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ

"वो लोग कि जब अल्लाह का ज़िक्र किया जाता है तो उनके दिल लरज़ उठते हैं"

यानि तवाज़अ इख़्तियार करने वाले लोगों की यह निशानी है कि जब उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र होता है तो उनके दिल ख़ौफ़ से काँप उठते हैं। यह मज़मून सूरतुल अन्फ़ाल में भी आया है: {اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ} (आयत 2) "मोमिन तो बस वही हैं कि जब अल्लाह का ज़िक्र किया जाये तो उनके दिल लरज़ उठते हैं।"

وَالصّٰبِرِيْنَ عَلٰي مَآ اَصَابَهُمْ وَالْمُقِيْمِي الصَّلٰوةِ ۙ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۔—35

"और उनको जो भी तकलीफ़ पहुँचे उस पर सब्र करने वाले और नमाज़ क़ायम करने वाले हैं, और जो कुछ हमने उनको दिया है उसमें से वो ख़र्च करते हैं।"

आयत 36

وَالْبُدْنَ جَعَلْنٰهَا لَكُمْ مِّنْ شَعَآىِٕرِ اللّٰهِ

"और क़ुर्बानी के ऊँटों को हमने तुम्हारे लिए शआइरुल्लाह में से बनाया है"

क़ुर्बानी के जानवर ख़ासतौर पर ऊँट भी अल्लाह के शआइर में से हैं।

لَكُمْ فِيْهَا خَيْرٌ ۖ

"तुम्हारे लिए उनमें भलाई है"

कि उनका गोश्त तुम ख़ुद भी खाते हो और गुरबाअ को भी खिलाते हो।

فَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا صَوَآفَّ ۚ

"तो तुम उन पर अल्लाह का नाम लो उन्हें सफ़ों में खड़ा करके।"

स्वाफ्फ़, साफ्फ़ा की जमा है, यानि सफ़ में खड़े हुए। यह ऊँटों की क़ुर्बानी का तरीक़ा बताया गया है कि उन्हें क़िब्ला रुख़ सफ़-बस्ता खड़े करके नहर करो। चूँकि ऊँट को गिरा कर ज़िबह करना बहुत मुश्किल है, इसलिए खड़े-खड़े ही उसकी गर्दन में बरछा मारा जाता है। इससे उसकी गर्दन की बड़ी रग से ख़ून को फ़व्वारा छूटता है और जब ज़्यादा ख़ून निकल जाता है तो वो ख़ुद-ब-ख़ुद नीचे गिर पड़ता है। हदीस में आता है कि हज्जतुल विदा के मौक़े पर हुज़ूर ﷺ ने सौ ऊँटों की क़ुर्बानी दी थी, जिनमें से त्रैसठ (63) ऊँटों को आप ﷺ ने इसी तरीक़े से ख़ुद अपने दस्ते मुबारक से नहर फ़रमया था। हुज़ूर ﷺ ज्योंहि एक ऊँट को बरछा मारते थे अगला ऊँट फ़ौरन अपनी गर्दन हाज़िर कर देता था। गोया आप ﷺ के हाथों ज़िबह होना उनके लिए एक बहुत बड़ा ऐज़ाज़ था:

नशवद नसीबे दुश्मन कि शूद हलाके तैग़त
सरे दोस्तां सलामत कि तू ख़ंजर आज़माई!

यह शऊर उन्हें अल्लाह तआला की तरफ़ से अता हुआ था। ऊँट तो फिर जानदार है, अल्लाह तआला ने तो एक सूखी लकड़ी को ऐसा शऊर अता फ़रमा दिया था कि वह हुज़ूर ﷺ के फ़राक़ में बेक़रार होकर रोने लग पड़ी थी। यह ईमान अफ़रोज़ वाक़िया अहादीस में तफ़सील से बयान हुआ है, जिसका ख़ुलासा यूँ है कि शुरु-शुरु में मस्जिदे नबवी के अंदर हुज़ूर ﷺ जिस जगह पर खड़े होकर ख़ुत्बा दिया करते थे वहाँ खजूर का एक ख़ुश्क तना मौजूद था। आप ख़ुत्बे के लिए खड़े होते तो उसके साथ टेक लगा लेते। बाद में इस मक़सद के लिए जब मिम्बर बन गया तो आप ﷺ ने उस पर खड़े होकर ख़ुत्बा देना पसंद फ़रमाया। लकिन जब आप ﷺ पहले दिन मिम्बर पर तशरीफ़ फ़रमा हुए तो उस ख़ुश्क लकड़ी ऐसी आवाज़ें आना शुरु हो गईं जैसे कोई बच्चा बिलख-बिलख कर रो रहा हो। यानि वो ख़ुश्क लकड़ी अपनी महरूमी पर रो रही थी कि आज के बाद उसे हुज़ूर ﷺ की मईयत नसीब नहीं होगी। उस रोज़ से उसका नाम "हनाना" (रक़्त वाली) पड़ गया। बाद में उस जगह पर एक सतून तामीर कर दिया गया, जो "सतूने हनाना" से मौसूम है। मौलाना रूम रह. ने अपने इस शेर में इसी वाक़िये की तरफ़ इशारा किया है"

फ़लसफ़ी को मुन्करे हन्नाना अस्त
अज़ हवासे अंबिया बेगाना अस्त

कि फ़लसफ़ी को "हन्नाना" जैसे मामले की समझ नहीं आ सकती, इसलिये कि वह अंबिया के मक़ाम व मर्तबे से वाक़िफ़ नहीं है। वह तो अंबिया किराम अलै. को भी आम लोगों पर ही क़यास करता है। एक अक़्लियत पसंद शख़्स तो ऐसे वाक़िये को तस्लीम करने से फ़ौरन इंकार कर देगा। सर सैय्यद अहमद ख़ान भला कैसे तस्लीम करते कि एक सूखी लकड़ी से रोने की आवाज़ आ सकती है। बहरहाल पुराने ज़माने में ऐसी बातों का इंकार फ़लसफ़ी किया करते थे, आज-कल साइंसदान और अक़्लियत परस्त दानिशवर इन बातों के मुन्कर हैं।

"तो जब उनके पहलु ज़मीन पर टिक जायें" فَإِذَا وَجَبَتْ جُنُوبُهَا

जब ख़ून बहने से ऊँट कमज़ोर हो जाता है तो फिर वो एक तरफ़ को अपनी करवट के बल ज़मीन पर गिर पड़ता है।

"तो अब उसमें से ख़ुद भी खाओ और क़नाअत से बैठे रहने वाले और सवाल करने वाले को भी खिलाओ!" فَكُلُوا مِنْهَا وَأَطْعِمُوا الْقَانِعَ وَالْمُعْتَرَّ ۚ

ऐसे मौक़े पर उन सफ़ेद पोश नादारों को भी मत भूलो जो अपनी ख़ुद्दारी और क़नाअत के सबब किसी के आगे दस्ते सवाल दराज़ नहीं करते। लेकिन उसके साथ-साथ उन मोहताजों को भी खिलाओ जो अपनी महरूमी के हाथों बेक़रार होकर माँगने के लिए आपके पास आ गये हैं।

كَذٰلِكَ سَخَّرْنٰهَا لَكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ــ36

"इसी तरह हमने उनको तुम्हारे लिए मुसख्खर कर दिया है ताकि तुम शुक्र अदा करो।"

ऊँट इतना बड़ा जानवर है मगर अल्लाह तआला ने उसे तुम्हारे लिए इस अंदाज़ से मुसख्खर कर दिया है कि तुम उस पर बरछा मार कर नहर कर लेते हो और फिर उसका गोश्त खाते हो। उसके लिए तुम पर लाज़िम है कि तुम अल्लाह की नेअमतों का शुक्र अदा किया करो।

आयत 37

لَنْ يَّنَالَ اللّٰهَ لُحُوْمُهَا وَلَا دِمَآؤُهَا وَلٰكِنْ يَّنَالُهُ التَّقْوٰي مِنْكُمْ ۭ

"अल्लाह तक तो ना इनके गोश्त पहुँचते हैं और ना इनके खून, लेकिन उस तक पहुँचता है तुम्हारी तरफ़ से तक़वा।"

कुर्बानी का असल फ़लसफ़ा यही है, बल्कि हर इबादत का फ़लसफ़ा यही है। किसी भी इबादत का एक ज़ाहिरी पहलु या ढ़ाँचा है और एक उसकी रूह है। ज़ाहिरी ढ़ाँचा अपनी जगह अहम है और वो इसलिए ज़रुरी है कि उसके बग़ैर उस इबादत का बजा लाना मुम्किन नहीं, लेकिन यह ज़ाहिरी पैकर असल दीन और असल मक़सूद नहीं है। किसी भी इबादत से असल मक़सूद उसकी रूह है। इसी नुक़्ते को अल्लामा इक़बाल ने इन अशआर में वाज़ेह किया है:

रह गई रस्मे अज़ान, रूहे बिलाली ना रही
फ़लसफ़ा रह गया, तल्क़ीने ग़ज़ाली ना रही

और

नमाज़-ओ-रोज़ा क़ुर्बानी-ओ-हज
यह सब बाक़ी हैं, तू बाक़ी नहीं है!

चुनाँचे क़ुर्बानी का असल मक़सूद हमारे दिलों का तक़वा और इख्लास है। अल्लाह के यहाँ जो चीज़ अहम है वो यह है कि जो शख़्स क़ुर्बानी दे रहा है वो अपनी मामूल की ज़िन्दगी में उसकी नाफ़रमानी से कितना डरता है? वो अपने रोज़मर्रा के मामलात में अल्लाह के अहकाम व क़वानीन का किस क़द्र पाबंद है? किस क़द्र वो अपनी तवानाईयाँ, अपनी सलाहियतें और अपना माल अल्लाह की राह में सर्फ़ कर रहा है? क्या क़ुर्बानी के जानवर का अहतमाम उसने रिज़्क़े हलाल से किया है? इस क़ुर्बानी के पीछे उसका जज़्बा-ए-इताअत व ईसार किस क़द्र कार फ़रमा है? यह और इसी नौइयत की दूसरी शराइत जो क़ुर्बानी की असल रूह और तक़वे का तअय्युन करती हैं अगर मौजूद हैं तो उम्मीद रखनी चाहिए कि क़ुर्बानी अल्लाह के हुज़ूर क़ाबिले क़ुबूल होगी। लेकिन अगर यह सब कुछ नहीं तो ठीक है आपने गोश्त खा लिया, कुछ गरीबों को भी उसमें से हिस्सा मिल गया, इसके अलावा शायद क़ुर्बानी से और कुछ फ़ायदा हासिल ना हो।

كَذٰلِكَ سَخَّرَهَا لَكُمْ لِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰي مَا هَدٰىكُمْ ۭ

"इसी तरह उसने उन्हें तुम्हारे लिए मुसख्खर कर दिया है ताकि तुम अल्लाह की तकबीर किया करो उस हिदायत पर जो उसने तुम्हें बख्शी है।"

मुसलमान साल में दो ईदें मनाते हैं। एक ईदुल फ़ितर है जो रोज़ों के बाद आती है और दूसरी ईदुल अज़हा जो हज के साथ मुन्सलिक है। इस ज़िमन में यह नुक्ता लायक़-ए-तवज्जोह है कि सूरतुल बक़रह के 23 वें रुकूअ (आयत 185) में रोज़ों के ज़िक्र के बाद भी बिल्कुल यही हुक्म वारिद हुआ है: {وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰي مَا هَدٰىكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ} "ताकि तुम लोग अल्लाह की तकबीर बयान करो उस हिदायत पर जिससे उसने तुम्हें सरफ़राज़ किया है और ताकि तुम शुक्र अदा किया करो।" यानि दोनों मौक़ों पर अल्लाह की तकबीर बुलंद करते हुए उसकी किब्रियाई का इज़हार करने की ख़ुसूसी हिदायत की गई है। इसी लिए ईदैन की नमाज़ों के लिए आते-जाते तकबीरें पढ़ने की ताकीद अहादीस में मिलती है और ईदैन की नमाज़ों के अंदर भी इज़ाफ़ी तकबीरें पढ़ी जाती हैं।

وَبَشِّرِ الْمُحْسِنِيْنَ ــ37

"और (ऐ नबी ﷺ!) मोहसिनीन को बशारत दे दीजिए।"

मोहसिनीन से वो लोग मुराद हैं जो इस्लाम, ईमान और तक़वे की मंज़िलें तय करते हुए दर्जा-ए-अहसान तक पहुँचने की कोशिश करते हैं और अल्लाह की तौफ़ीक़ से उस दर्जे को हासिल कर लेते हैं।

اللهم ربنا اجعلنا منهم۔ اللهم ربنا اجعلنا منهم۔ اللهم ربنا اجعلنا منهم۔ आमीन! सुम्मामीन!

आयात 38 से 41 तक

اِنَّ اللّٰهَ يُدٰفِعُ عَنِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ خَوَّانٍ كَفُوْرٍ ــ38 اُذِنَ لِلَّذِيْنَ يُقٰتَلُوْنَ بِاَنَّهُمْ ظُلِمُوْا ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ عَلٰي نَصْرِهِمْ لَقَدِيْرُۨ ــ39
الَّذِيْنَ اُخْرِجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ بِغَيْرِ حَقٍّ اِلَّآ اَنْ يَّقُوْلُوْا رَبُّنَا اللّٰهُ ۭ وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَّصَلَوٰتٌ وَّمَسٰجِدُ يُذْكَرُ فِيْهَا
اسْمُ اللّٰهِ كَثِيْرًا ۭ وَلَيَنْصُرَنَّ اللّٰهُ مَنْ يَّنْصُرُهٗ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ ــ40 اَلَّذِيْنَ اِنْ مَّكَّنّٰهُمْ فِي الْاَرْضِ اَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ وَاَمَرُوْا بِالْمَعْرُوْفِ
وَنَهَوْا عَنِ الْمُنْكَرِ ۭ وَلِلّٰهِ عَاقِبَةُ الْاُمُوْرِ ــ41

अब हमें जिन आयात का मुताअला करना है उनमें वारिद अहकाम हुज़ूर ﷺ की दावत व तहरीर की जद्दो-जहद में एक नये मोड़ (Turning point) की हैसियत रखते हैं। मेरे ख़्याल में ये वही आयात हैं जो हिजरत के सफ़र के दौरान में नाज़िल हुई थीं। (क़ब्ल अज़ आयत 11 के ज़िमन में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि. की रिवायत का हवाला गुज़र चुका है जिससे साबित होता है कि इस सूरत की कुछ आयात अस्ना-ए-सफ़र हिजरत में नाज़िल हुई थीं)। इन आयात का मज़मून और मक़ाम व महल इस पहलु से भी क़ाबिले ग़ौर है कि सूरतुल बक़रह के 23वें रुकूअ में यानि तक़रीबन सूरत के वस्त में रमज़ानुल मुबारक और रोज़े के अहकाम व फ़जाइल का ज़िक्र है और उसके बाद दो रुकूअ (24वाँ और 25वाँ रुकूअ) क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह और मनासिके हज के अहकाम पर मुश्तमिल हैं। बिल्कुल इसी तरह यहाँ भी इस सूरत के तक़रीबन वस्त में रुकूअ मनासिके हज पर मुश्तमिल हैं और उसके फ़ौरन बाद अब क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह का ज़िक्र आ रहा है। इससे अग़रचे सूरतुल बक़रह और सूरतुल हज की बाहमी मुशाबिहत भी ज़ाहिर होती है लेकिन एक बहुत अहम हक़ीक़त यह वाज़ेह होती है कि इन दोनों मज़ामीन (हज और क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह) में बहुत गहरा रब्त है। इस रब्त और ताल्लुक़ की वजह बज़ाहिर यह नज़र आती है कि काबातुल्लाह जो ख़ुदा-ए-वाहिद की इबादत के लिए बनाया गया था वो इन आयात के नुज़ूल के वक़्त मुशरिकीन के ज़ेरे तसल्लुत था और तौहीद के इस मरकज़ को उन्होने ने शिर्क का अड्डा बनाया हुआ था। चुनाँचे उस

वक़्त उम्मते मुस्लिमा का पहला फ़र्ज़े मन्सबी यह क़रार पाया कि वो अल्लाह के इस घर को मुशरिकीन के तसल्लुत से वागज़ार करा के उसे वाक़िअतन तौहीद का मरकज़ बनाये। लेकिन यह काम दावत और वअज़ से होने वाला तो नहीं था, इसके लिए ताक़त का इस्तेमाल नागुज़ीर था। यही वजह है कि इन दोनों मक़ामात पर हज बैतुल्लाह के अहकाम के साथ-साथ क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह का तज़किरा है।

आयत 38

"यक़ीनन अल्लाह मुदाफ़अत करेगा अहले ईमान की तरफ़ से।"

اِنَّ اللّٰهَ يُدٰفِعُ عَنِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ

इस तहरीर में अब जो नया दौर शुरु होने जा रहा है उसमें मुसल्लह तसादुम नागुज़ीर है। चुनाँचे आयत ज़ेरे नज़र का असल पैग़ाम यह है कि इस रज़्म गाह में अहले ईमान ख़ुद को तन्हा ना समझें। उनकी मदद और नुसरत के लिए और उनके दुश्मनों को बेख व बुन से उखाड़ फेंकने के लिए अल्लाह उनकी पुश्त पर मौजूद है।

"अल्लाह बिल्कुल पसंद नहीं करता हर बड़े ख्यानत करने वाले, नाशुक्रे को।"

اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ خَوَّانٍ كَفُوْرٍ۔38

यह यक़ीनन मुशरिकीने मक्का का तज़किरा है, जो एक तरफ़ ख्यानत की इंतहाई हुदूद को फलाँग गये तो दूसरी तरफ़ नाशुक्री में भी नंग-ए-इंसानियत ठहरे। यह लोग हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलै. की विरासत के अमीन थे। बैतुल्लाह गोया उन लोगों के पास उन बुज़ुर्गों की अमानत थी। यह घर तो तामीर ही अल्लाह की इबादत के लिए हुआ था। हज़रत इब्राहीम अलै. ने इसकी गवाही इन अल्फ़ाज़ में दी थी: {رَبَّنَا لِيُقِيْمُوا الصَّلٰوةَ} (सूरह इब्राहीम 38) कि परवरदिगार! मैं अपनी औलाद को इस घर के पहलु में इसलिये बसाने जा रहा हूँ कि यह लोग तेरी इबादत करें। फिर आपने अपने और अपनी औलाद के लिये यह दुआ भी की थी: {وَّاجْنُبْنِيْ وَبَنِيَّ اَنْ نَّعْبُدَ الْاَصْنَامَ} (सूरह इब्राहीम 35) कि परवरदिगार! मुझे और मेरी औलाद को बुतपरस्ती की लानत से बचाये रखना। चुनाँचे मुशरिकीने मक्का ने अल्लाह के इस घर और तौहीद के इस मरकज़ को शिर्क से आलूदा करके अल्लाह तआला ही की नाफ़रमानी नहीं की थी बल्कि हज़रत इब्राहीम अलै. की मुतबर्रक अमानत में ख्यानत का इरतकाब भी किया था।

दूसरी तरफ़ यह लोग अपने करतूतों से अल्लाह की नाशुक्री के मुरतकिब भी हुए। वो खूब जानते थे कि पूरे जज़ीर नुमाए अरब में मक्के को जो मरकज़ी हैसियत हासिल है वो बैतुल्लाह की वजह से है। वो इस हक़ीक़त से भी अच्छी तरह वाक़िफ़ थे कि मशरिक़ व मग़रिब के दरमियान तिजारती मैदान में उनकी इजारादारी ख़ाना-ए-काबा ही के तुफ़ैल क़ायम है। उन्हें यह भी मालूम था कि शाम (मौसम-ए-गर्मा) और यमन (मौसम-ए-सर्मा) के दरमियान उनके क़ाफ़िले क़बाइली हमलों और रिवायती लूटमार से महफ़ूज़ रहते थे तो सिर्फ़ इसलिए कि वो बैतुल्लाह के मुतवल्ली थे। यही वह हक़ाइक़ थे जिनकी तरफ़ उनकी तवज्जोह सूरतुल क़ुरैश में दिलाई गयी है:

لِاِيْلٰفِ قُرَيْشٍ Á۝ اٖلٰفِهِمْ رِحْلَةَ الشِّتَاۗءِ وَالصَّيْفِ Â۝ فَلْيَعْبُدُوْا رَبَّ هٰذَا الْبَيْتِ Ã۝ الَّذِيْٓ اَطْعَمَهُمْ مِّنْ جُوْعٍ ۙ وَّاٰمَنَهُمْ مِّنْ خَوْفٍ Ä۝

"क़ुरैश को मानूस करने के लिए! उन्हें सर्दियों और गर्मियों के सफ़र से मानूस करने के लिए! पस उन्हें चाहिए कि वो (इस सब कुछ के शुक्र में) इस घर के रब की बंदगी करें, जिसने उन्हें भूख में खाना खिलाया, और ख़ौफ़ में अमन बख़्शा।"

मगर इस सबके बावजूद उन्होंने नाशुक्री की इंतहा कर दी। उन्होंने अल्लाह की बंदगी के बजाय बुतपरस्ती इख़्तियार की और बैतुल्लाह को तौहीद का मरकज़ बनाने के बजाय उसे बुतखाने में तब्दील कर दिया। इस पसमंज़र को ज़हन नशीन करके आयत ज़ेरे नज़र का मुताअला किया जाये तो स्याक़ व सबाक़ बिल्कुल वाज़ेह हो जाता है कि वो खाइन और नाशुक्रे लोग कौन हैं जिन्हें अल्लाह पसंद नहीं करता।

आयत 39

"अब इजाज़त दी जा रही है (क़िताल की) उन लोगों को जिन पर जंग मुसल्लत की गई है, इसलिए कि उन पर ज़ुल्म किया गया है।"

اُذِنَ لِلَّذِيۡنَ يُقٰتَلُوۡنَ بِاَنَّهُمۡ ظُلِمُوۡا ؕ

सालहा साल से उन्हें तशद्दुद व ताज़ीब का निशाना बनाया जा रहा था। नित नये तरीक़ों से उन्हें सताया जा रहा था। उन्हें घर-बार छोड़ने पर मजबूर कर दिया गया। अब तक अल्लाह तआला ने एक हुक्म के ज़रिये उनके हाथ बाँध रखे थे। यह हुक्म अगरचे वही-ए-जली की सूरत में क़ुरान में नहीं आया मगर सूरह अन्निसा की आयत 77 में {كُفُّوۡۤا اَيۡدِيَكُمۡ} के अल्फ़ाज़ में तस्दीक़ की गई है कि उन्हें अपने हाथ रोकने का हुक्म दिया गया था। इससे यही साबित होता है कि वही-ए-ख़फ़ी के ज़रिये हुज़ूर ﷺ को यह हुक्म दिया गया था और आप ﷺ ने तमाम अहले ईमान को इससे मुत्तलअ फ़रमा दिया था कि ख़्वाह कुछ भी हो जाये, तुम्हें टुकड़े-टुकड़े कर दिया जाये, तुम्हें ज़िन्दा भून कर कबाब कर दिया जाये, तुम लोग जवाब में हाथ नहीं उठाओगे। बहरहाल अब तक तो यह हुक्म था, मगर अब उनके हाथ खोले जा रहे हैं। अब उन्हें इजाज़त दी जा रही है कि आइंदा वो ईंट का जवाब पत्थर से दे सकते हैं।

"और यक़ीनन अल्लाह उनकी नुसरत पर क़ादिर है।"

وَاِنَّ اللّٰهَ عَلٰى نَصۡرِهِمۡ لَقَدِيۡرُ ۙ—39

ताकीदन यहाँ फिर फ़रमा दिया गया है कि वो अपने आप को अकेला ना समझें, यक़ीनन अल्लाह उनकी मदद पर पूरी तरह क़ादिर है और वो ज़रूर उनकी भरपूर मदद फ़रमायेगा।

आयत 40

"वो लोग जो नाहक़ अपने घरों से निकाल दिए गये"

الَّذِيۡنَ اُخۡرِجُوۡا مِنۡ دِيَارِهِمۡ بِغَيۡرِ حَقٍّ

"सिर्फ़ इस (जुर्म) पर कि उन्होंने कहा: हमारा रब अल्लाह है!" إِلَّآ أَن يَقُولُوا۟ رَبُّنَا ٱللَّهُ ۗ

उनका जुर्म बस यह था कि वो अहले मक्का के बातिल मअबूदों को छोड़ कर सिर्फ़ एक अल्लाह को अपना रब और मअबूद मानते थे, जिसकी पादाश में उन्हें घर-बार छोड़ने पर मजबूर कर दिया गया।

"और अगर अल्लाह बाज़ लोगों को बाज़ दूसरे लोगों के ज़रिये दूर ना करता रहता" وَلَوْلَا دَفْعُ ٱللَّهِ ٱلنَّاسَ بَعْضَهُم بِبَعْضٍ

यह मज़मून इससे पहले सूरतुल बक़रह की आयत 251 में भी आ चुका है। वहाँ पर मुशरिक बादशाह जालूत के साथ हज़रत तालूत की जंग का ज़िक्र करने के बाद यह उसूल बयान फ़रमाया गया कि अल्लाह तआला वक़्तन-फ़-वक़्तन ज़मीन की सफ़ाई करता रहता है। फ़ासिद लोग हों या फ़ासिद तहज़ीब व सक़ाफ़त, जब उनका फ़साद ज़मीन में एक हद से तजावुज़ करने लगता है तो अल्लाह तआला अपनी मशीयत से उसे किसी दूसरी ताक़त के ज़रिये नेस्तो-नाबूद कर देता है। सूरतुल बक़रह की मज़कूरा आयत में फ़रमाया गया कि अगर अल्लाह ऐसे ना करता तो: {لَّفَسَدَتِ ٱلْأَرْضُ} ज़मीन में हर तरफ़ फ़साद ही फ़साद होता। अलबत्ता यहाँ इस बिगाड़ या फ़साद के एक दूसरे पहलु की तरफ़ तवज्जोह दिलाई गई है:

"तो ढहा दिए जाते सारी ख़ानक़ाहें, गिरजे, कनेसे और मस्जिदें, जिनमें कसरत से अल्लाह का नाम लिया जाता है।" لَّهُدِّمَتْ صَوَٰمِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَٰتٌ وَمَسَٰجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا ٱسْمُ ٱللَّهِ كَثِيرًا ۗ

صلوٰة, صَلَوٰتٌ की जमा है। صَلَوتَا इबरानी ज़बान का लफ़्ज़ है और इससे मुराद यहूदियों की इबादतखाने (Cinygogs) हैं। दरअसल इबरानी और अरबी ज़बानों में बहुत मुशाबिहत पाई जाती है। यूँ लगता है जैसे या तो इनका आपस में माँ-बेटी का रिश्ता है या फिर दोनों सगी बहनें हैं। यानि या तो अरबी ज़बान इबरानी से निकली है और या यह दोनों किसी एक ज़बान की शाखें हैं। चुनाँचे इन दोनों में बहुत से अल्फ़ाज़ बाहम मुशाबेह हैं। मसलन अरबी के लफ़्ज़ "सलाम" की जगह इबरानी "शोलोम" में बोला जाता है। इसी तरह इबरानी के "यौमे कपूर" को अरबी में "यौमे कफ्फ़ारा" कहा जाता है। यानि लफ्ज़ "यौम" तो ज्यों का त्यों वैसे ही है जबकि कपूर और काफ्फ़ारे में बुनियादी फ़र्क़ "पा" और "फ़ा" का है। अरबी में चूँकि "पा" नहीं है इसलिए अक्सर ज़बानों की "पा" की आवाज़ अरबी में आकर "फ़ा" से बदल जाती है। जैसे इससे पहले सूरतुल अंबिया की आयत 85 के तहत "ज़ुल किफ्ल" के हवाले से हिन्दी के लफ्ज़ "कपिल" का अरबी के "किफ्ल" की सूरत इख्तियार करने का ज़िक्र हुआ था। बहरहाल इबरानी और अरबी ज़बानों के अल्फ़ाज़ और उनकी इस्तलाहात में अक्सर मुशाबिहत पाई जाती है।

तो अगर अल्लाह तआला अपनी मशीयत के मुताबिक़ कुछ लोगों को कुछ लोगों के ज़रिये दफ़ा ना करता रहता, यानि मुफ़सिद क़ुव्वतों को नस्तो-नाबूद ना करता रहता तो दुनिया में तमाम मज़ाहिब की जितनी भी

इबादतगाहें हैं वो सबकी सब मुन्हदिम कर (ढहा) दी जातीं। ज़ाहिर है यह तमाम इबादत-गाहें अपने-अपने वक़्त में एक अल्लाह की इबादत के लिए बनाई गयी थीं।

"और अल्लाह लाज़िमन उसकी मदद करेगा जो उसकी मदद करेगा।" وَلَيَنْصُرَنَّ اللّٰهُ مَنْ يَّنْصُرُهٗ ۭ

इन अल्फ़ाज़ में अहले ईमान के लिए यह बहुत बड़ी ख़ुशख़बरी है। लिहाज़ा आयत का यह टुकड़ा हर मुसलमान को अज़बर होना चाहिए। इस इबारत में ताकीद का जो अस्लूब इख़्तियार किया गया है वह अरबी ज़बान में इंतहाई ताकीद के लिए इख़्तियार किया जाता है। फ़अल मुज़ारेअ से पहले लाम मफ़तूह (ज़बर के साथ) भी हर्फ़े ताकीद है, जबकि आख़िर में नून मुशद्दद से मायने में मज़ीद ताकीद पैदा होती है। जैसे अफ़अलु के मायने हैं कि मैं यह करूँगा, लेकिन ल'अफ़अलन्ना के मायने होंगे कि मैं यह लाज़िमन करके रहूँगा।

लेकिन इस सिलसिले में यह बात भी याद रखने की है कि यह यक तरफ़ा मामला नहीं है, बल्कि यह वादा मशरूत है। तुम अल्लाह की मदद करोगे तो अल्लाह तुम्हारी मदद करेगा! जैसे सूरतुल बक़रह की आयत 152 में फ़रमाया गया है: {فَاذْكُرُوْنِيْٓ اَذْكُرْكُمْ} कि तुम मुझे याद रखो, मैं तुम्हें याद रखूँगा। यह नहीं हो सकता है कि तुम लोग अल्लाह के बागियों के साथ दोस्ती की पींगें बढ़ाओ, तुम्हारी वफ़ादारियाँ अल्लाह के दुश्मनों के साथ हों और फिर भी तुम चाहो कि वो तुम्हारी मदद करे। इस सिलसले में इसी सूरत की आयत 15 का मज़मून भी मद्देनज़र रखना ज़रुरी है, जिसमें अल्लाह की मदद पर बंदा-ए-मोमिन के पुख़्ता यक़ीन का मामला ज़ेरे बहस आया है। दरअसल यह बंदा-ए-मोमिन का "यक़ीन" ही है जो उसके सब्र व इस्तक़ामत और साबित व इस्तक़लाल के लिए सहारा फ़राहम करता है। और अगर दिल में यक़ीन की जगह बे-यक़ीनी डेरे जमा ले और इस बे-यक़ीनी के हाथों नुसरत-ए-इलाही की उम्मीद की रस्सी ही कट जाये तो फिर ऐसे शख़्स के लिए दुनिया में और कोई सहारा नहीं रहता।

"यक़ीनन अल्लाह ताक़तवर है, ज़बरदस्त है।" اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ ؀40

यानि अल्लाह ने तुम्हारी मदद का वादा किया है तो जान लो कि वह ज़बरदस्त ताक़त का मालिक और हर वक़्त, हर जगह तुम्हारी मदद पर पूरी तरह क़ादिर है।

आयत 41

"वो लोग कि अगर उन्हें हम ज़मीन में तमक्कुन अता कर दें तो" اَلَّذِيْنَ اِنْ مَّكَّنّٰهُمْ فِي الْاَرْضِ

"तमक्कुन" का ज़िक्र इससे पहले हज़रत युसुफ़ अलै. के हवाले से सूरह युसुफ़ की आयत 21 और 56 में भी आ चुका है: {وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوْسُفَ فِي الْاَرْضِ ۚ} "और इसी तरह हमने युसुफ़ अलै. को ज़मीन में तमक्कुन अता किया।" तो अपने उन मोमिन बंदों को अगर हम किसी ख़ित्ता-ए-ज़मीन का इख़्तियार व इक़्तदार अता करेंगे तो उनका लायहा अमल क्या होगा?

"वो नमाज़ क़ायम करेंगे" اَقَامُوا الصَّلٰوةَ

मोमिनीन को अगर किसी मुल्क पर हुकूमत करने का इख़्तियार मिलेगा तो वो अपनी पहली तरजीह के तौर पर नमाज़ का निज़ाम क़ायम करेंगे। चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने मदीना पहुँचते ही जुमें के क़याम का अहतमाम फ़रमाया और अक़ामते सलाह के लिए तरजीही बुनियादों पर मस्जिदे नबवी की तामीर की।

"और ज़कात अदा करेंगे" وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ

फिर ज़कात का बाक़ायदा निज़ाम क़ायम किया जायेगा ताकि मआशरे के पसमान्दा तबक़े से ताल्लुक़ रखने वाले अफ़राद की कफ़ालत का बंदोबस्त हो सके।

"और नेकी का हुक्म देंगे और बुराई से रोकेंगे।" وَاَمَرُوْا بِالْمَعْرُوْفِ وَنَهَوْا عَنِ الْمُنْكَرِ

"और तमाम अमूर का अंजाम तो अल्लाह ही के क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में है।" وَلِلّٰهِ عَاقِبَةُ الْاُمُوْرِ ــ41

अगर यह रिवायत सही है कि यह आयात सफ़र-ए-हिजरत के दौरान में नाज़िल हुई थीं तो उनमें से ख़ुसूसी तौर पर यह आयत हुज़ूर ﷺ के मदीना तशरीफ़ आवरी के फ़ौरन बाद की सूरतेहाल के लिए मन्शूर (manifesto) का दर्जा रखती है। चूँकि अनक़रीब मदीने में आप ﷺ का वरूद एक बेताज बादशाह की हैसियत से होने वाला था और मदीना पहुँचते ही आप ﷺ को इख़्तियार व इक़तदार मिलने वाला था इसलिए अल्लाह तआला ने पेशगी बता दिया कि इस सूरते हाल मे आप ﷺ की तरजीहात क्या होंगी। चुनाँचे जिस तरह आज-कल हर सियासी पार्टी इलेक्शन से पहले अपना मन्शूर जारी करती है कि हुकूमत मिलने की सूरत में हमारी तरजीहात क्या होंगी, इसी तरह अल्लाह तआला ने इस आयत में अहले ईमान को हमेशा के लिए एक मन्शूर अता कर दिया है कि किसी मुल्क में इक़तदार मिलने की सूरत में उन्हें कौन-कौन से अमूर तरजीही बुनियादों पर अंजाम देने होंगे।

यह वो ख़ास आयात (38 से 41) हैं जिनकी वजह से बाज़ लोग इस सूरत को मदनी सूरत समझते हैं, अलबत्ता दुरुस्त मौक़फ़ यही है कि यह आयात या तो अस्ना-ए-सफ़र-ए-हिजरत में नाज़िल हुईं या नबी अकरम ﷺ के मदीने पहुँचने के फ़ौरन बाद। लेकिन इन्हें मज़ामीन हज की मुनासबत से इस मक्की सूरत में इस मक़ाम पर रख दिया गया। इसके बाद अगली आयत से दोबारा मक्की अंदाज़ के मज़ामीन का आग़ाज़ हो रहा है।

आयात 42 से 48 तक

وَاِنْ يُّكَذِّبُوْكَ فَقَدْ كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوْحٍ وَّعَادٌ وَّثَمُوْدُ ۙ ــ42 وَقَوْمُ اِبْرٰهِيْمَ وَقَوْمُ لُوْطٍ ۙ ــ43 وَّاَصْحٰبُ مَدْيَنَ ۚ وَكُذِّبَ مُوْسٰى فَاَمْلَيْتُ لِلْكٰفِرِيْنَ ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ ۚ فَكَيْفَ كَانَ نَكِيْرِ ــ44 فَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنٰهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ فَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوْشِهَا وَبِئْرٍ مُّعَطَّلَةٍ وَّقَصْرٍ مَّشِيْدٍ ــ45 اَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَتَكُوْنَ لَهُمْ قُلُوْبٌ يَّعْقِلُوْنَ بِهَآ اَوْ اٰذَانٌ يَّسْمَعُوْنَ بِهَا ۚ فَاِنَّهَا لَا تَعْمَى الْاَبْصَارُ وَلٰكِنْ تَعْمَى الْقُلُوْبُ الَّتِيْ فِي الصُّدُوْرِ ــ46 وَيَسْتَعْجِلُوْنَكَ بِالْعَذَابِ وَلَنْ يُّخْلِفَ اللّٰهُ وَعْدَهٗ ۭ وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِّمَّا تَعُدُّوْنَ ــ47 وَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَمْلَيْتُ لَهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ ثُمَّ اَخَذْتُهَا ۚ وَاِلَيَّ الْمَصِيْرُ ــ48

आयत 42

"और (ऐ नबी ﷺ!) अगर ये लोग आपको झुठला रहे हैं तो इनसे पहले क़ौमे नूह, क़ौमे आद और क़ौमे समूद के लोग भी (रसूलों को) झुठला चुके हैं।"

وَاِنْ يُّكَذِّبُوْكَ فَقَدْ كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوْحٍ وَّعَادٌ وَّثَمُوْدُ ۙ﴿42﴾

आयत 43

"और इब्राहीम अलै. की क़ौम और लूत अलै. की क़ौम भी (रसूलों की तकज़ीब कर चुकी है)।"

وَقَوْمُ اِبْرٰهِيْمَ وَقَوْمُ لُوْطٍ ۙ﴿43﴾

आयत 44

"और मदयन के लोग भी (अपने पैग़म्बर को झुठला चुके हैं) और मूसा अलै. की भी तकज़ीब हो चुकी है।"

وَّاَصْحٰبُ مَدْيَنَ ۚ وَكُذِّبَ مُوْسٰى

"तो मैंने उन काफ़िरों को कुछ ढ़ील दी, फिर मैंने उनको पकड़ लिया, तो कैसी रही मेरी पकड़?"

فَاَمْلَيْتُ لِلْكٰفِرِيْنَ ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ ۚ فَكَيْفَ كَانَ نَكِيْرِ ﴿44﴾

इन अक़वाम के अंजाम से मुताल्लिक़ तफ़सीलात क़ुरान में बार-बार बयान हुई हैं।

आयत 45

"और कितनी ही बस्तियाँ थीं जिन्हें हमने हलाक कर दिया और वो ज़ालिम थीं"

فَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنٰهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ

अल्लाह तआला ने इससे पहले जिस-जिस बस्ती को हलाक किया उनके बासी मुजरिम और गुनहगार थे। जब भी कोई बस्ती कुफ़्र व शिर्क और दूसरे गुनाहों के सबब मअसियत और बुराई का मरकज़ बन जाती तो उसका वुजूद मआशरे के लिए ख़तरे की अलामत बन जाता। चुनाँचे जिस तरह इंसानी जिस्म का कोई हिस्सा गल-सड़ कर मुतअफ्फ़न मवाद से भर जाये तो बाक़ी जिस्म को महफ़ूज़ रखने के लिए उस हिस्से या अज़ू को काट फेंकना नागुज़ीर हो जाता है, बिल्कुल इसी तरह अल्लाह की मशीयत से हर ऐसी बस्ती को सफ़ह-ए-हस्ती से मिटा दिया गया।

"तो वो गिरी पड़ी हैं अपनी छतों पर"

فَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوْشِهَا

"और कितने ही नाकारा कुएँ (बंद पड़े हैं)"

وَبِئْرٍ مُّعَطَّلَةٍ

इन तबाह होने वाली बस्तियों में कितने कुएँ होंगे जो किसी वक़्त बड़ी मेहनत से खोदे गये होंगे। अपने-अपने वक़्त पर उन कुओं पर पानी भरने वाले लोगों

के कैसे-कैसे जमघटे रहा करते होंगे, मगर अब वो कुऐं वीरान व मौत्तल पड़े हैं।

"और कितने ही मज़बूत बनाये हुए महल
(भी वीरान पड़े हैं)।"
وَقَصْرٍ مَّشِيْدٍ ــ45

उन क़ौमों के गचकारी किए गये मज़बूत और आलीशान महल अब खंडरात में तब्दील हुए पड़े हैं। स्पेन में जाकर अल् हमरा को देखो!, कभी यह महल मुस्लमान फ़रमानरवाओं का मस्कन था, आज उसकी क्या कैफ़ियत है? क़ुरतबा की आलीशान मस्जिद को देखो! जहाँ अब ना कोई सज्दा करने वाला है और ना वहाँ किसी को सज्दा करने की इजाज़त है।
[وَبِئْرٍ और قَرْيَةٍ ,وَّقَصْرٍ पर अतफ़ है]

आयत 46

"तो क्या यह लोग ज़मीन में घूमें-फिरे नहीं
हैं कि होते इनके दिल जिनसे यह समझते!"
اَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَتَكُوْنَ لَهُمْ قُلُوْبٌ يَّعْقِلُوْنَ بِهَآ

अगर यह लोग अक़्ल और समझ से काम लेते तो पैग़म्बरों को झुठलाने वाली क़ौमों की बस्तियों के खंडरात को देख कर इबरत पकड़ते और असल बात की तह तक पहुँचते। इस आयत में एक बहुत अहम नुक़्ता बयान हुआ है कि यहाँ लफ़्ज "क़ल्ब" के साथ अक़्ल और समझने के ताल्लुक़ की बात हुई है। यह बात कई दफ़ा इससे पहले भी मैं दोहरा चुका हूँ कि इंसान एक मुरक्कब वजूद का हामिल है। इस मुरक्कब की एक इकाई तो उसका जिस्म है जो ख़ालिस एक हैवानी वजूद है। इस वुजूद में हैवानों की तमामतर ख़ुसूसियात (faculties) मौजूद हैं। इस लिहाज़ से इंसान गोया आलातरीन हैवान है, यानि अपने जिस्म की साख्त के ऐतबार से वो तमाम हैवानों से अफ़ज़ल है। लेकिन अपने इस हैवानी वुजूद के साथ-साथ इंसान अपना एक रूहानी वुजूद भी रखता है, जो उसके हैवानी वुजूद से अलैहदा और मुस्तक़िल बिज्ज़ात वुजूद है। इंसान के इन दोनों वजूदों के मिलाप और इम्तिज़ाज की तरकीब और कैफ़ियत के मुताल्लिक़ हम कुछ भी अदराक नहीं रखते। हम तो यह भी नहीं जानते कि इंसानी वुजूद के अंदर जो "जान" (life) है वह कहाँ है? क्या यह जान दिल में है? लेकिन दिल तो आज-कल बदल भी दिया जाता है और जान वहीं की वहीं रहती है। तो क्या यह जान दिल से मुताल्लिक़ है या दिमाग़ से मुताल्लिक़? हक़ीक़त बहरहाल यही है कि इसके मुताल्लिक़ हम वाक़ई नहीं जानते। तो जब हम जान के मुताल्लिक़ ही कुछ नहीं जानते तो इससे आगे बढ़ कर "रूह" के मुताल्लिक़ हम क्या जान सकते हैं कि इंसान की रूह उसके जिस्म के अंदर किस तौर से सौहबत पज़ीर है?

इत्तेसाल-ए-बे-तकय्युफ़ बे क़यास!
हस्त रब्बुन नास रा बा जाने नास!

इंसान के हैवानी और रुहानी वुजूद में बाहम मुसाहबत और इत्तेसाल तो है, लेकिन उसकी नौइयत वाक़िअतन क्या है? बक़ौल शायर यह मुसाहबत और इत्तेसाल "बे-तकय्युफ़ व बे-क़यास" है। ना इसकी कैफ़ियत मालूम हो सकती है और ना ही इसे किसी और चीज़ पर क़यास किया जा सकता है, लेकिन इंसान के दो अलैहदा-अलैहदा वुजूद बहरहाल मौजूद हैं। इनमें से उसका रूहानी वुजूद बहुत पहले आलमे अरवाह में पैदा किया गया था,

जिसका हवाला सूरतुल अन्आम में इस तरह आया है: {كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ} (आयत 94) जबकि हर इंसान के माद्दी या जिस्मानी वुजूद की पैदाईश इस दुनिया या आलमे ख़ल्क़ के अंदर अपने-अपने वक़्त पर होती है।

इस सारी तफ़सील में स्याक़ व सबाक़ के हवाले से समझने की असल बात यह है कि इंसान के दोनों वजूदों में से हर वुजूद की अपनी-अपनी सलाहियतें और अपने-अपने ज़राय इल्म हैं। रूह की अपनी अक़्ल, अपनी बसारत और अपनी समाअत है, जबकि हैवानी वुजूद की अपनी अक़्ल है, अपनी आँखें और अपने कान हैं। सूरह बनी इस्राईल की इस आयत में हैवानी वुजूद ही के हवास का ज़िक्र है: {اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْـُٔوْلًا} (आयत 36)। सूरह बनी इस्राईल के मुताअले के दौरान इस आयत के तहत हैवानी वुजूद के ज़राय इल्म से मुताल्लिक़ तफ़सीलन गुफ्तुगू हो चुकी है। अब आयत ज़ेरे नज़र में रूहानी वुजूद के ज़राय इल्म की बात हो रही है। इसको मुख़्तसरन यूँ समझ लें कि रूह देखती भी है, हँसती भी है और समझती भी है। चुनाँचे इस हवाले से यहाँ फ़रमाया गया है कि इन लोगों के दिल होते जिनसे यह बात समझते!

"या (होते इनके) कान जिनसे यह सुनते!" اَوْ اٰذَانٌ يَّسْمَعُوْنَ بِهَا ۚ

"तो असल में आँखें अंधी नहीं होती, बल्कि दिल अंधे हो जाते हैं जो सीनों के अंदर हैं।" فَاِنَّهَا لَا تَعْمَى الْاَبْصَارُ وَلٰكِنْ تَعْمَى الْقُلُوْبُ الَّتِيْ فِي الصُّدُوْرِ ــ46

ज़रा ग़ौर करें, यह कौनसा अंधापन है? दरअसल यही वो अंधापन था जो अबु जहल, अबु लहब और वलीद बिन मुग़ीरह जैसे लोगों को लाहक़ था। उनकी आँखे तो अंधी नहीं थीं, लेकिन उनके दिल मुकम्मल तौर पर अंधे हो चुके थे। उनकी रूहों पर दुनियवी अग़राज़, हठधर्मियों और असबियतों के ग़लीज़ पर्दे पड़ चुके थे। यही वजह थी कि उनकी रूहें ना देख सकती थीं, ना सुन सकती थीं और ना समझ सकती थीं। ऐसे लोगों का देखना और सुनना सिर्फ़ हैवानी सतह का देखना और सुनना होता है। जैसे तेज़ी से गुज़रती हुई कार को देख कर इंसान भी एक तरफ़ हो जाता है और कुत्ता भी उससे अपना बचाव कर लेता है। इस हवाले से इंसान और कुत्ते के देखने में कोई फ़र्क़ नहीं। चुनाँचे इंसान को चाहिए की अपनी सलाहियतों के ऐतबार से हैवानों की सतह से तरक्क़ी करके इंसानी मक़ाम व मर्तबा हासिल करने की कोशिश करे। इसी नुक़्ते को इक़बाल जैसे साहिबे नज़र ने यूँ बयान किया है: *"दीदन दिगर आमोज़! शुनीदन दिगर आमोज़!"* कि ज़रा दूसरी तरह का देखना सीखो और दूसरे अंदाज़ का सुनना सीखो!

क़ुरैशे मक्का के तिजारती क़ाफ़िले अज़ाबे इलाही की ज़द में आने वाली तबाह शुदा बस्तियों के खंडरात के पास से गुज़रा करते थे। वो लोग उन खंडरात को देखते तो थे लेकिन वो यह सब कुछ हैवानी आँखों से देखते थे। चुनाँचे ना वो उनसे कोई सबक़ हासिल करते थे, ना इबरत पकड़ते थे। इंसान की यही वो कैफ़ियत है जिसके बारे में आयत ज़ेरे मुताअला में फ़रमाया गया है कि आँखें अंधी नहीं हुआ करतीं बल्कि दिल अंधे हो जाते हैं जो सीनों के अंदर हैं। इसलिए कि रूह का मसकन क़ल्ब है। हम यह तो नहीं समझ सकते कि इस मिलाप की नौइयत और कैफ़ियत क्या है और ना ही हम दिल के अंदर किसी तरीक़े से रूह के असरात का खोज लगा सकते हैं,

क्योंकि वो एक ग़ैर मरई चीज़ है, लेकिन इंसान के हैवानी वजूद के अंदर रूह का ताल्लुक़ बहरहाल उसके "क़ल्ब" के साथ ही है!

आयत 47

وَيَسْتَعْجِلُونَكَ بِالْعَذَابِ وَلَنْ يُخْلِفَ اللهُ وَعْدَهُ ۚ

"और (ऐ नबी ﷺ!) यह लोग अज़ाब के बारे में आपसे जल्दी मचा रहे हैं, और अल्लाह अपने वादे की हरगिज़ ख़िलाफ़ वर्ज़ी नहीं करेगा।"

अज़ाब के बारे में अल्लाह तआला के सब वादे हर सूरत में पूरे होंगे और इन लोगों पर अज़ाब आकर रहेगा। अलबत्ता यह अज़ाब कब आयेगा? किस शक्ल में आयेगा? उसके बारे में सिर्फ़ अल्लाह ही जानता है। उसने ऐसी तमाम मालूमात ख़ुफ़िया रखी हैं। सूरतुल अंबिया में इस मौज़ू से मुतल्लिक़ हुज़ूर ﷺ से यूँ ऐलान करया गया: {وَاِنْ اَدْرِيْٓ اَقَرِيْبٌ اَمْ بَعِيْدٌ مَّا تُوْعَدُوْنَ} "और मैं नहीं जानता कि जिस अज़ाब का तुम लोगों से वादा किया जा रहा है वो क़रीब है या कुछ अर्से बाद आयेगा।"

وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِّمَّا تَعُدُّوْنَ ــ47

"और यक़ीनन एक दिन आप ﷺ के रब के नज़दीक एक हज़ार बरस (साल) की तरह है उस हिसाब से जो गिनती तुम करते हो।"

दुनिया में आम इंसानी हिसाब के मुताबिक़ एक हज़ार वर्ष का अरसा अल्लाह के नज़दीक एक दिन के बराबर है। अस्सज्दा में यही मज़मून इस तरह बयान हुआ है: {يُدَبِّرُ الْاَمْرَ مِنَ السَّمَآءِ اِلَى الْاَرْضِ ثُمَّ يَعْرُجُ اِلَيْهِ فِيْ يَوْمٍ كَانَ مِقْدَارُهٗٓ اَلْفَ سَنَةٍ مِّمَّا تَعُدُّوْنَ} (आयत 5) "अल्लाह आसमान से ज़मीन तक के हर मामले की तदबीर करता है, फिर यह चढ़ता है उसकी तरफ़ एक ऐसे दिन में जिसकी मिक़दार है एक हज़ार साल, जैसे तुम लोग गिनते हो।" यह "तदबीरे अम्र" दरअसल अल्लाह तआला के उन तीन कामों में से एक है जिनके मुताल्लिक़ क़ब्ल अज़ें सूरह युनुस की आयत 3 के तहत (जिल्द चहारम) शाह वली उल्लाह रह. की तस्नीफ़ "हुज्जतुल्लाहुल बालगा" के हवाले से बताया जा चुका है, यानि इब्दाअ, ख़ल्क़ और तदबीर। चुनाँचे इस तीसरे काम (तदबीर) के सिलसिले में अल्लाह तआला की तरफ़ से फ़रिश्तों को तरह-तरह के अहकाम दिए जाते हैं और फिर फ़रिश्तों के ज़रिये से ही उन अहकाम की तन्फ़ीज़ (execution) होती है। इस मन्सूबा बंदी में अल्लाह के यहाँ एक दिन का अरसा इंसानी गिनती के मुताबिक़ एक हज़ार बरस के बराबर है। यहाँ यह नुक्ता भी ज़हन नशीन कर लीजिए कि यह मज़मून चूँकि बहुत वाज़ेह अल्फ़ाज़ के साथ क़ुरान में दो मर्तबा आया है इसलिए यह मामला "मुतशाबेहात" में से नहीं बल्कि "मोहकमात" के दर्जे में है।

आयत 48

وَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَمْلَيْتُ لَهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ

"और कितनी ही बस्तियाँ ऐसी थीं कि मैंने उन्हें ढ़ील दी थी लेकिन वो गुनहगार थीं"

ثُمَّ اَخَذْتُهَا ۚ وَاِلَیَّ الْمَصِیْرُ ﴿48﴾

"फिर मैंने उनको पकड़ लिया, और (सबने) मेरी ही तरफ़ लौट कर आना है।"

आयात 49 से 57 तक

قُلْ یٰۤاَیُّهَا النَّاسُ اِنَّمَاۤ اَنَا لَكُمْ نَذِیْرٌ مُّبِیْنٌ ۫﴿49﴾ فَالَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِیْمٌ ﴿50﴾ وَالَّذِیْنَ سَعَوْا فِیْۤ اٰیٰتِنَا مُعٰجِزِیْنَ اُولٰٓىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِیْمِ ﴿51﴾ وَمَاۤ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَّسُوْلٍ وَّلَا نَبِیٍّ اِلَّاۤ اِذَا تَمَنّٰۤى اَلْقَى الشَّیْطٰنُ فِیْۤ اُمْنِیَّتِهٖ ۚ فَیَنْسَخُ اللّٰهُ مَا یُلْقِی الشَّیْطٰنُ ثُمَّ یُحْكِمُ اللّٰهُ اٰیٰتِهٖ ؕ وَاللّٰهُ عَلِیْمٌ حَكِیْمٌ ۙ﴿52﴾ لِّیَجْعَلَ مَا یُلْقِی الشَّیْطٰنُ فِتْنَةً لِّلَّذِیْنَ فِیْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ وَّالْقَاسِیَةِ قُلُوْبُهُمْ ؕ وَاِنَّ الظّٰلِمِیْنَ لَفِیْ شِقَاقٍ بَعِیْدٍ ۙ﴿53﴾ وَّلِیَعْلَمَ الَّذِیْنَ اُوْتُوا الْعِلْمَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَیُؤْمِنُوْا بِهٖ فَتُخْبِتَ لَهٗ قُلُوْبُهُمْ ؕ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهَادِ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْۤا اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ ﴿54﴾ وَلَا یَزَالُ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا فِیْ مِرْیَةٍ مِّنْهُ حَتّٰى تَاْتِیَهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً اَوْ یَاْتِیَهُمْ عَذَابُ یَوْمٍ عَقِیْمٍ ﴿55﴾ اَلْمُلْكُ یَوْمَىِٕذٍ لِّلّٰهِ ؕ یَحْكُمُ بَیْنَهُمْ ؕ فَالَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ فِیْ جَنّٰتِ النَّعِیْمِ ﴿56﴾ وَالَّذِیْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰیٰتِنَا فَاُولٰٓىِٕكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُّهِیْنٌ ﴿57﴾

आयत 49

قُلْ یٰۤاَیُّهَا النَّاسُ اِنَّمَاۤ اَنَا لَكُمْ نَذِیْرٌ مُّبِیْنٌ ۫﴿49﴾

"(ऐ नबी ﷺ!) आप ऐलान कर दीजिए कि मैं तो तुम्हारे लिए बस एक वाज़ेह तौर पर ख़बरदार करने वाला हूँ।"

कि मुझे तो अल्लाह तआला ने भेजा ही इसी लिए है कि मैं तुम लोगों को आने वाली ज़िन्दगी के मराहिल की तमाम तफ़सीलत से वाज़ेह तौर पर ख़बरदार कर दूँ।

आयत 50

فَالَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِیْمٌ ﴿50﴾

"तो जो लोग ईमान लायें और नेक अमल करें उनके लिए (अल्लाह की तरफ़ से) मग़फिरत और बहुत बा-इज़्ज़त रोज़ी है।"

आयत 51

وَالَّذِیْنَ سَعَوْا فِیْۤ اٰیٰتِنَا مُعٰجِزِیْنَ اُولٰٓىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِیْمِ ﴿51﴾

"और जो लोग हमारी आयात को नीचा दिखाने की तगो-दो (कोशिश) करते हैं वही हैं जो जहन्नम वाले हैं।"

यानि वो लोग जिनकी सारी भाग-दौड़ और तगो-दो अल्लाह तआला की आयात को नाकाम और ग़ैर-मुअस्सर बनाने, गोया अल्लाह तआला की मुख़ालफ़त और उसकी मन्सूबा बंदी की राह में रोड़े अटकाने में हैं वो जहन्नम का ईंधन बनेगें।

आयत 52

وَمَاۤ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَّسُوْلٍ وَّلَا نَبِیٍّ اِلَّاۤ اِذَا تَمَنّٰۤى اَلْقَى الشَّیْطٰنُ فِیْۤ اُمْنِیَّتِهٖ ۚ

"और हमने नहीं भेजा आप ﷺ से पहले कोई रसूल और ना कोई नबी, मगर यह कि जब उसने ख़ुद कोई ख़्याल बाँधा तो शैतान ने उसके ख़्याल में ख़लल अंदाज़ी की।"

लफ्ज़ "तमन्ना" उर्दू में भी मुस्तमिल है। लुग्वी ऐतबार से इस माद्दे में आरज़ू और ख़्वाहिश का मफ़हूम पाया जाता है। यानि जिस तरह एक आम आदमी सोचता है, ख़्वाहिश करता है और मुख़्तलिफ़ अमूर में मन्सूबा बंदी करता है इसी तरह नबी और रसूल भी सोचता है और मन्सूबा बंदी करता है। मसलन अबु तालिब की वफ़ात के बाद जब अबु लहब बनु हाशिम का सरदार बन गया और उसकी ज़ाती दुश्मनी के बाइस आप ﷺ को अपने क़बीले की पुश्त पनाही हासिल ना रही तो आप ﷺ ने सोचा कि अब क्या करूँ? (*"किस तरफ़ जाऊँ, किधर देखूँ, किसे आवाज़ दूँ!"*) चुनाँचे इन हालात में आप ﷺ ने ताईफ़ का सफ़र करने का मन्सूबा बनाया, लेकिन वहाँ से कोई मुस्बत जवाब ना मिला और आप ﷺ को बज़ाहिर नाकाम लौटना पड़ा। बल्कि हज़रत आयशा रज़ि. की रिवायत के मुताबिक़ वो दिन आप ﷺ की ज़िन्दगी का सख़्त तरीन दिन (यौमे ओहद से भी ज़्यादा सख़्त) साबित हुआ। बहरहाल आप ﷺ ने मन्सूबा बंदी भी की और उसके मुताबिक़ कोशिश भी की। यह अलग बात थी कि अल्लाह तआला की मशीयत में यह सआदत अहले ताईफ़ के बजाय अहले यसरिब की क़िस्मत में लिखी गई थी। तो जब कोई नबी अपनी मन्सूबा बंदी करता है तो शैतान अपनी तरफ़ से उनके ख़्याल में कुछ ना कुछ ख़लल ज़रूर डालता है।

अस्मते अंबिया के बारे में तमाम अहले ईमान चूँकि बहुत हस्सास हैं इसलिए आयत ज़ेरे मुताअला के अल्फ़ाज़ से जो मफ़हूम बज़ाहिर सामने आता है वो गोया हर मुसलमान के हलक़ में फँस जाता है। यही वजह है कि आयत की तफ़्सीर व तशरीह में बहुत सी दौरे अज़कार तावीलात भी लाई गई हैं। बहरहाल मेरे ख़्याल में यह बिल्कुल सीधा-सादा मसला है। इसको यूँ समझें कि किसी रसूल या नबी की शख़्सियत और ख़्वाहिशात व तालीमात के दो पहलु हैं। एक पहलू तो वो है जो बराहेरास्त वही-ए-इलाही के ताबेअ है। इस पहलु से मुताल्लिक़ मामलात में अल्लाह तआला की तरफ़ से वही-ए-जली या वही-ए-ख़फी के ज़रिये से बराहेरास्त वाज़ेह हिदायात मिलती रहती हैं। उन हिदायात या अहकाम में किसी ख़ता या ग़लती का कोई इम्कान नहीं और ना ही उसमें शैतान या शैतानी क़ुव्वतें किसी क़िस्म की दरअंदाज़ी कर सकती हैं।

दूसरी तरफ़ नबी की शख़्सियत का एक ज़ाती और निजी पहलु भी है। ऐसा नहीं है कि नबी की कोई ज़ाती शख़्सियत या सोच होती ही नहीं, बल्कि बहुत से मामलात में तो अल्लाह तआला की तरफ़ से नबी को एक हुक्म दे दिया जाता है और उस हुक्म पर अमल करने के बारे मे नबी ख़ुद सोचता है, ख़ुद मन्सूबा बंदी करता है और ख़ुद फैसला करता है। मसलन हुज़ूर ﷺ को एक हुक्म दे दिया गया: { وَأَنذِرْ عَشِيرَتَكَ الْأَقْرَبِينَ} (अल् शौअरा:214) कि आप ﷺ तब्लीग़ शुरु कीजिए और इस सिलसले में अपने क़रीबी रिश्तेदारों को ख़बरदार कीजिए। इस हुक्म की तामील के लिए हुज़ूर ﷺ ने हज़रत अली रज़ि. को एक ज़्याफ़त का इंतेज़ाम करने का हुक्म दिया। आप ﷺ ने बनु हाशिम के तमाम मर्दों को मदऊ किया (दावत दी) और सबको खाना खिलाया। आप ﷺ ने उन तक अपना दावती पैग़ाम पहुँचाने के लिए यही तरीक़ा मुनासिब ख़्याल किया। गोया ऐसे किसी हुक्म पर अमल के लिए जुज़्यात की मन्सूबा बंदी कर करने का ताल्लुक़ नबी के ज़ाती इज्तेहाद से है। चुनाँचे इन तदबीरी मामलात का वो दर्जा नहीं होता जो बराहेरास्त वही की हिदायत का होता है।

इस फ़र्क़ को सहाबा किराम रज़ि. बहुत अच्छी तरह समझते थे और इसकी बहुत सी अमली मिसालें भी हमें सीरत से मिलती हैं। मसलन ग़ज़वा-ए-बदर के मौक़े पर आप ﷺ ने एक जगह की तख़्सीस फ़रमा कर हुक्म दिया कि लश्कर का कैंप इस जगह पर लगाया जाये। इस पर कुछ सहाबा ने अर्ज़ किया: या रसूल अल्लाह! अगर इस जगह के इन्तेख़ाब के बारे में अल्लाह तआला की तरफ़ से ख़ास हुक्म है तो सरे तस्लीम ख़म है! लेकिन अगर यह आप ﷺ की राय है तो हमें भी अपनी राय पेश करने की इजाज़त दी जाये। आप ﷺ ने ना सिर्फ़ उन्हें राय देने की इजाज़त दी बल्कि उनकी राय को क़ुबूल भी फ़रमाया और लगे लगाये कैंप को उखाड़ कर उनकी तजवीज़ कर्दा जगह पर लगाने का हुक्म दिया। यह चूँकि हुज़ूर ﷺ की ज़ाती तदबीर थी इसलिए सहाबा रज़ि. को भी इसमें इख़्तलाफ़ की गुंजाईश महसूस हुई और उन्होंने अपने अमली तजुर्बात की रौशनी मे राय दी। दूसरी तरफ़ अगर यह फ़ैसला वही की रौशनी में किया गया होता तो कैंप के उखाड़े जाने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता था।

इसी तरह "ताबीरे नख्ल" के मामले की मिसाल भी बहुत वाज़ेह है। रसूल अल्लाह ﷺ जब मदीना तशरीफ़ लाये तो आप ﷺ ने देखा कि वहाँ पर खजूर के दरख्तों को बार आवर करने के लिए ज़ेरह पोशी का मसनूई तरीक़ा (artificial pollination) इख़्तियार किया जाता था, यानि नर दरख्त के फूलों को मादा दरख़्त के फूलों को झाड़ा जाता था। आप ﷺ ने कुछ लोगों को यह अमल करते देखा तो फ़रमाया कि अगर तुम लोग ऐसा ना करो तो शायद बेहतर हो! आप ﷺ के ऐसा फ़रमाने पर लोगों ने उस साल वो अमल ना किया तो उसके नतीजे में फ़सल वाज़ेह तौर पर कम हुई। इस पर उन लोगों ने हुज़ूर ﷺ से अर्ज़ किया कि इस साल हमने ताबीरे नख्ल के मरव्वजा तरीक़े पर अमल नहीं किया तो हमारी फ़सल कम हुई है। इस पर आप ﷺ ने फ़रमाया: ((اَنْتُمْ اَعْلَمُ بِاَمْرِ دُنْيَاكُمْ))[8] यानि आप लोग अपने दुनियवी अमूर के बारे में मुझसे बेहतर जानते हैं। अल्लाह तआला मुहद्दिसीने आज़ाम पर अपनी ख़ुसूसी रहमतें, बरकतें और नेअमतें नाज़िल फरमाए। उन लोगों की मेहनतों और कोशिशों से हुज़ूर ﷺ की अहादीस महफ़ूज़ हुईं और फिर हम तक पहुँच कर हमारी रहनुमाई का ज़रिया बनीं। हुज़ूर ﷺ के इस फ़रमान का मक़सद और मफ़हूम यही है कि दुनियवी मामलात के मुख्तलिफ़ शौबों में तुम लोगों को ऐसे तजुर्बात हासिल हैं जो मुझे हासिल नहीं और मैं तुम लोगों को उन मामलात में तालीम देने के लिए मबऊस भी नहीं हुआ। मैं तुम लोगों को ज़राअत के उसूल सिखाने के लिए नहीं आया। मैं तुम लोगों को हिदायत देने के लिए आया हूँ और यही मेरी रिसालत का बुनियादी मक़सद और मौज़ू है। चुनाँचे रिसालत से मुताल्लिक़ अमूर में आप लोगों के लिए मेरा इत्तेबाअ लाज़मी है, लेकिन दुनियवी मामलात तुम लोग अपने तजुर्बाती इल्म की बुनियाद पर ही अंजाम दो। अगर देखा जाये तो अहले मदीना का ताबीरे नख्ल से मुताल्लिक़ मज़कूरा अमल साइंसी उसूलों पर मब्नी था। साइंस की बुनियाद तजुर्बात पर रखी गई है और साइंसी उलूम का इरतक़ाअ (डेवलपमेंट) भी तजुर्बात के ज़रिये से ही मुम्किन होता है। चुनाँचे यह फ़रमा कर हुज़ूर ﷺ ने तजुर्बाती या साइंसी उलूम की गोया हौसला अफ़ज़ाई फ़रमाई कि अपने दुनयवी मामलात को तुम लोग मुझसे बेहतर जानते हो और यह कि इन अमूर को तुम लोग अपने तजुर्बाती इल्म की बुनियाद पर ही अंजाम दिया करो।

इस सारी बहस का ख़ुलासा यह है कि नबी या रसूल की वो तालीमात और वो हिदायात जो बराहेरास्त वही-ए-इलाही के ताबेअ हों उनमें ना तो किसी क़िस्म की ख़ता का इम्कान है और ना ही उनके अंदर शैतानी क़ुव्वतों की दरअंदाज़ी का कोई अहतमाल है, लेकिन आम दुनयवी अमूर और उनकी जुज़इयात के बारे फ़ैसले फैसले करते हुए जहाँ एक नबी या रसूल अपने ज़ाती इज्तेहाद से काम ले रहा हो वहाँ पर किसी ख़ता या शैतानी ख़लल अंदाज़ी का इम्कान मौजूद रहता है। मेरी यह तौजीह "मौज़हुल क़ुरान" में बयान करदा शाह अब्दुल क़ादिर रह. की राय के क़रीब-तरीन है, लिहाज़ा मुझे इस पर पूरा इत्मिनान है।

فَيَنْسَخُ اللّٰهُ مَا يُلْقِي الشَّيْطٰنُ ثُمَّ يُحْكِمُ اللّٰهُ اٰيٰتِهٖ ؕ

"तो अल्लाह मन्सूख कर देता है उसे जो कुछ शैतान ने डाला होता है, फिर अल्लाह अपने फ़ैसलों को पुख़्ता कर देता है।"

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۙ—52

"और अल्लाह सब कुछ जानने वाला, कमाल हिकमत वाला है।"

आयत 53

لِّيَجْعَلَ مَا يُلْقِي الشَّيْطٰنُ فِتْنَةً لِّلَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ وَّالْقَاسِيَةِ قُلُوْبُهُمْ ؕ

"ताकि वो शैतान की तरफ़ से की गई आमेज़िश को फ़ितना बना दे उन लोगों के लिए जिनके दिलों में मर्ज़ हो, और जिनके दिल सख़्त हो चुके हों।"

وَاِنَّ الظّٰلِمِيْنَ لَفِيْ شِقَاقٍۭ بَعِيْدٍ ۙ—53

"और यक़ीनन ज़ालिम लोग मुख़ालफ़त और दुश्मनी में बहुत दूर जा चुके हैं।"

आयत 54

وَلِيَعْلَمَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْعِلْمَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ

"और इसलिए भी कि वो लोग जान जायें जिन्हें इल्म दिया गया हो, कि यक़ीनन यह हक़ है आप ﷺ के रब की तरफ़ से"

ऐसे लोग किसी भी मामले में अल्लाह के फ़ैसले पर पूरे शरहे सद्र के साथ ईमान और यक़ीन रखते हैं।

فَيُؤْمِنُوْا بِهٖ فَتُخْبِتَ لَهٗ قُلُوْبُهُمْ ؕ

"तो वो उस पर ईमान ले आयें और उनके दिल उस (अल्लाह) के आगे झुक जायें।"

وَاِنَّ اللّٰهَ لَهَادِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ —54

"और यक़कीनन अल्लाह अहले ईमान को सीधे रास्ते की तरफ़ हिदायत देने वाला है।"

यानि मुख्लिस अहले ईमान से किसी वक़्त अगर कहीं कोई लग्ज़िश हो जाती है तो अल्लाह तआला उनका रुख़ फेर कर दुरुस्त सिम्त की तरफ़ मोड़ देता है।

आयत 55

وَلَا يَزَالُ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي مِرْيَةٍ مِّنْهُ

"और काफ़िर तो इस बारे में हमेशा शक व शुबह में ही रहेंगे"

उनके शुकूक व शुबहात तो कभी ख़त्म होने वाले नहीं हैं।

حَتَّىٰ تَأْتِيَهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً أَوْ يَأْتِيَهُمْ عَذَابُ يَوْمٍ عَقِيمٍ ــ55

"यहाँ तक कि या तो उन पर क़यामत अचानक आ धमके या एक बाँझ दिन का अज़ाब उन पर मुसल्लत हो जाये।"

"बाँझ दिन" से मुराद ऐसा दिन है जो हर ख़ैर से ख़ाली हो। यानि वो दिन जिसमें किसी क़ौम की बर्बादी का फ़ैसला हो जाये।

आयत 56

اَلْمُلْكُ يَوْمَئِذٍ لِّلَّهِ ۚ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ ۚ

"उस दिन बादशाही सिर्फ़ अल्लाह की होगी। वही उनके माबैन फ़ैसला करेगा।"

कायनात का हाकिम हक़ीक़ी तो अल्लाह तआला ही है। कायनात में हर जगह, हर वक़्त उसी का हुक्म चल रहा है, लेकिन आज इस हक़ीक़त पर कुछ पर्दे पड़े हुए हैं। चुनाँचे दुनिया में हमें ड्रामे के किरदारों की तरह छोटे-छोटे बादशाह, फ़रमानरवा, सरदार वग़ैरह भी मुक़तदिर और बा-इख़्तियार नज़र आते हैं, लेकिन जब क़यामत का दिन आयेगा तो ये सब पर्दे उठ जायेंगे। उस दिन तमाम बनी नौए इंसान को मुख़ातिब करके पूछा जायेगा:{لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ} "आज के दिन बादशाही किसकी है?" और फिर ख़ुद ही जवाब दिया जायेगा: {لِلَّهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ} (मोमिन 16) "सिर्फ़ उस अल्लाह की जो वाहिद है, क़हहार है!"

فَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ــ56

"और जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक आमाल किए वो नेअमतों वाले बाग़ात में होंगे।"

आयत 57

وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا فَأُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُّهِينٌ ــ57

"जो जिन लोगों ने कुफ़्र की रविश इख़्तियार की और हमारी आयात को झुठलाया उनके लिए रुसवा कुन अज़ाब होगा।"

आयात 58 से 64 तक

وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ثُمَّ قُتِلُوْٓا اَوْ مَاتُوْا لَيَرْزُقَنَّهُمُ اللّٰهُ رِزْقًا حَسَنًا ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ــ58 لَيُدْخِلَنَّهُمْ مُّدْخَلًا يَّرْضَوْنَهٗ ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَعَلِيْمٌ حَلِيْمٌ ــ59 ذٰلِكَ ۚ وَمَنْ عَاقَبَ بِمِثْلِ مَا عُوْقِبَ بِهٖ ثُمَّ بُغِيَ عَلَيْهِ لَيَنْصُرَنَّهُ اللّٰهُ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَعَفُوٌّ غَفُوْرٌ ــ60 ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ يُوْلِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَيُوْلِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌۢ بَصِيْرٌ ــ61 ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ وَاَنَّ مَا يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖ هُوَ الْبَاطِلُ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْعَلِيُّ الْكَبِيْرُ ــ62 اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَاۗءِ مَاۗءً ۡ فَتُصْبِحُ الْاَرْضُ مُخْضَرَّةً ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَطِيْفٌۢ خَبِيْرٌ ۚــ63 لَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيْدُ ءــ64

आयत 58

وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

"और वो लोग जिन्होंने हिजरत की अल्लाह के राह में"

हिजरत का यह मज़मून यहाँ पर मौक़ा-ए-महल की मुनास्बत से आया है। यह मक्की दौर के आख़री ज़माने की सूरत है और जिस तरह हिजरत से मुत्सलन बाद सूरतुल बक़रह का नुज़ूल हुआ इसी तरह हिजरत से मुत्तस्लन क़ब्ल सूरतुल हज नाज़िल हुई।

ثُمَّ قُتِلُوْٓا اَوْ مَاتُوْا لَيَرْزُقَنَّهُمُ اللّٰهُ رِزْقًا حَسَنًا ۭ

"फिर वो क़त्ल हो गये या फ़ौत हो गये (दोनों सूरतों में) अल्लाह उनको लाज़िमन रिज़्क़े हसना अता फ़रमायेगा।"

وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ خَيْرُ الرّٰزِقِيْنَ ــ58

"और यक़ीनन अल्लाह ही बेहतरीन रिज़्क़ देने वाला है।"

आयत 59

لَيُدْخِلَنَّهُمْ مُّدْخَلًا يَّرْضَوْنَهٗ ۭ

"वह लाज़िमन उनको ऐसे मक़ाम में दाखिल करेगा जिससे वो राज़ी हो जायेंगे।"

وَاِنَّ اللّٰهَ لَعَلِيْمٌ حَلِيْمٌ ــ59

"और अल्लाह यक़ीनन सब कुछ जानने वाला, तहम्मुल करने वाला है।"

आयत 60

ذٰلِكَ ۚ وَمَنْ عَاقَبَ بِمِثْلِ مَا عُوْقِبَ بِهٖ

"यह तो है ही! और जो शख़्स बदला ले उसी क़द्र जिस क़द्र उस पर ज़्यादती की गई"

ثُمَّ بُغِيَ عَلَيْهِ لَيَنْصُرَنَّهُ اللّٰهُ ۭ

"फिर उस पर मज़ीद ज़्यादती की जाये तो अल्लाह लाज़िमन उसकी मदद करेगा।"

اِنَّ اللّٰهَ لَعَفُوٌّ غَفُوْرٌ ــ60

"यक़ीनन अल्लाह माफ़ फ़रमाने वाला, बख़्शने वाला है।"

यानि मुसलमानों पर इससे क़ब्ल जो ज़्यादतियाँ हो चुकी हैं अब वो उनका बदला ले सकते हैं, और फिर मज़ीद किसी ज़्यादती की सूरत में भी अल्लाह उनकी मदद फ़रमायेगा।

आयत 61

ذٰلِكَ بِأَنَّ اللّٰهَ يُولِجُ الَّيلَ فِي النَّهَارِ وَيُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيلِ

"और यह इसलिए की अल्लाह रात को दिन में दाखिल करता है और दिन को रात में दाखिल करता है"

यानि इस कायनात का पूरा निज़ाम अद्ल व इंसाफ़ पर मब्नी है। रात-दिन का यह उलट-फेर इस निज़ाम के अंदर मौजूद ऐतदाल व तवाज़ुन की एक मिसाल है जिससे ज़ाहिर होता है कि कायनात का यह निज़ाम ऐसे ही चल रहा है जैसे कि उसे चलना चाहिए। इस निज़ाम को दुरुस्त रखने के लिए कुदरत की तरफ़ से जो तदाबीर इख़्तियार की जाती हैं उनसे मुताल्लिक़ क़ब्ल अज़ें आयत 40 (सूरह हज) में एक रहनुमा उसूल बताया गया है कि अल्लाह तआला दुनिया के निज़ाम में ज़ालिम और मुफ़सिद क़ौमों को मुस्तक़लन बर्दाश्त नहीं करता और दूसरी क़ौमों के ज़रिये उन्हें नेस्तो-नाबूद करता रहता है:{وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَّصَلَوٰتٌ وَّمَسٰجِدُ يُذْكَرُ فِيْهَا اسْمُ اللّٰهِ كَثِيْرًا } "और अगर अल्लाह बाज़ लोगों को बाज़ दूसरे लोगों के ज़रिये दूर ना करता रहता, तो ढहा दिया जाता ख़ानक़ाहों, गिरजों, मअबूदों और मस्जिदों को, जिनमें कसरत से अल्लाह का नाम लिया जाता है।" चुनाँचे जिस तरह अल्लाह तआला इंसानी मआशरे के निज़ाम को अद्ल पर क़ायम रखने के लिए इंतेज़ामात करता है उसी तरह उसने कायनाती और आफ़ाक़ी निज़ाम को भी ठीक-ठीक चलाने का अहतमाम कर रखा है।

وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ بَصِيرٌ ــ61

"और यह कि अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, सब कुछ देखने वाला है।"

आयत 62

ذٰلِكَ بِأَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ

"यह इसलिए कि अल्लाह ही हक़ है।"

अल्लाह की ज़ात बरहक़ है, जिसका हक़ होना क़तई और यक़ीनी है।

وَاَنَّ مَا يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖ هُوَ الْبَاطِلُ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْعَلِيُّ الْكَبِيْرُ ــ62

"और यह कि जिसको यह लोग पुकारते हैं उसके सिवा वो सब बातिल हैं, और यह कि यक़ीनन अल्लाह ही सबसे बुलंद और सबसे बड़ा है।"

आयत 63

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً ۚ فَتُصْبِحُ الْاَرْضُ مُخْضَرَّةً ۚ

"क्या तुमने नहीं देखा कि अल्लाह आसमान से पानी नाज़िल करता है तो ज़मीन सरसब्ज़ हो जाती है।"

اِنَّ اللّٰهَ لَطِيْفٌ خَبِيْرٌ ۚ‎ 63

"यक़ीनन अल्लाह बारीक बीन और बहुत बाख़बर है।"

यहाँ पर "लतीफ़" के यह मायने भी हैं कि अल्लाह तआला ख़ुफिया तदबीरें करने वाला है।

आयत 64

لَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ

"उसी का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।"

وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيْدُ ؀ 64

"और यक़ीनन अल्लाह बेनियाज़, अपनी ज़ात में ख़ुद हमीद है।"

उसे कोई एहतियाज नहीं, वह सतूद व सिफ़ात है, अपनी ज़ात में ख़ुद महमूद है, उसे किसी हम्द की ज़रूरत नहीं।

आयात 65 से 72 तक

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ سَخَّرَ لَكُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ وَالْفُلْكَ تَجْرِيْ فِي الْبَحْرِ بِاَمْرِهٖ ۭ وَيُمْسِكُ السَّمَاۗءَ اَنْ تَقَعَ عَلَي الْاَرْضِ اِلَّا بِاِذْنِهٖ ۭ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَءُوْفٌ
رَّحِيْمٌ ؀ 65 وَهُوَ الَّذِيْٓ اَحْيَاكُمْ ۡ ثُمَّ يُمِيْتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيْكُمْ ۭ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَكَفُوْرٌ ؀ 66 لِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا هُمْ نَاسِكُوْهُ فَلَا يُنَازِعُنَّكَ فِي الْاَمْرِ
وَادْعُ اِلٰى رَبِّكَ ۭ اِنَّكَ لَعَلٰى هُدًى مُّسْتَقِيْمٍ ؀ 67 وَاِنْ جٰدَلُوْكَ فَقُلِ اللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ؀ 68 اَللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيْمَا كُنْتُمْ فِيْهِ
تَخْتَلِفُوْنَ ؀ 69 اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمَاۗءِ وَالْاَرْضِ ۭ اِنَّ ذٰلِكَ فِيْ كِتٰبٍ ۭ اِنَّ ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرٌ ؀ 70 وَيَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا
لَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ سُلْطٰنًا وَّمَا لَيْسَ لَهُمْ بِهٖ عِلْمٌ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ نَّصِيْرٍ ؀ 71 وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيٰتُنَا بَيِّنٰتٍ تَعْرِفُ فِيْ وُجُوْهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الْمُنْكَرَ ۭ يَكَادُوْنَ
يَسْطُوْنَ بِالَّذِيْنَ يَتْلُوْنَ عَلَيْهِمْ اٰيٰتِنَا ۭ قُلْ اَفَاُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكُمْ ۭ اَلنَّارُ ۭ وَعَدَهَا اللّٰهُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ؀ 72

आयत 65

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ سَخَّرَ لَكُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ

"क्या तुमने देखा नहीं कि अल्लाह ने ज़मीन की सब चीज़ों को तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र कर दिया है।"

यानि तुम्हारी ख़िदमत गुज़ारी और तुम्हारी ज़रूरियात की बहम रसानी में लगा दिया है।

وَالْفُلْكَ تَجْرِيْ فِي الْبَحْرِ بِاَمْرِهٖ ۭ

"और कश्ती को जो चलती है समुद्र में उसके हुक्म से!"

وَيُمْسِكُ السَّمَاۗءَ اَنْ تَقَعَ عَلَي الْاَرْضِ اِلَّا بِاِذْنِهٖ ۭ

"और वो थामे हुए है आसमान को कि वो गिर ना जाये ज़मीन पर मगर उसके हुक्म से।"

اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ؀ 65

"यक़ीनन अल्लाह इंसानों के साथ बहुत ही शफ़ीक़ है, बहुत महरबान है।"

आयत 66

وَهُوَ الَّذِيْٓ اَحْيَاكُمْ ۡ ثُمَّ يُمِيْتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيْكُمْ ۭ

"और वही है जिसने तुम्हें ज़िन्दा किया, फिर वो तुम्हें मौत देगा, फिर तुम्हें ज़िन्दा करेगा।"

اِنَّ الْاِنْسَانَ لَكَفُوْرٌ ؁66

"यक़ीनन इंसान बड़ा ही नाशुक्रा है।"

यानि पहले तुम मुर्दा थे और उसने तुम्हें ज़िन्दा किया। यह आयत सूरतुल बक़रह की इस आयत (आयत नम्बर 28) से गहरी मुशाबेहत रखती है: {كَيْفَ تَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَكُنْتُمْ اَمْوَاتًا فَاَحْيَاكُمْ ۚ ثُمَّ يُمِيْتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيْكُمْ ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ} दोनों आयात के अल्फ़ाज़ भी मिलते-जुलते हैं। सिर्फ़ सूरतुल बक़रह के "كُنْتُمْ اَمْوَاتًا" के अल्फ़ाज़ को ज़ेरे मुताअला आयत में दोहराया नहीं गया है। मज़मून दोनों आयात का बहरहाल एक ही है।

इस मज़मून का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआला ने तमाम इंसानों की अरवाह को आलम-ए-अरवाह में पैदा किया और उनसे अपनी रबूबियत का अहद {अलस्तु बिरब्बिकुम?} लेने के बाद सबको सुला दिया, बिल्कुल उसी तरह जैसे आज किसी चीज़ को कोल्ड स्टोरेज में रख दिया जाता है। यह तमाम इंसानों की पहली मौत थी। इसके बाद जब किसी रूह का रहमे मादर में किसी जनीन के साथ मिलाप होता है तो यह उस रूह या उस इंसान का अहयाये अव्वल है। फिर दुनियवी ज़िन्दगी के बाद जब उसे मौत आयेगी तो यह उसका "अमाता सानिया" होगा और जब उसे क़यामत को उठाया जायेगा तो वो अहयाये सानी होगा। इस मज़मून का ज़रवा-ए-सनाम (climax) सूरतुल ग़ाफ़िर (अल् मोमिन) की आयत 11 में आयेगा।

आयत 67

لِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا هُمْ نَاسِكُوْهُ فَلَا يُنَازِعُنَّكَ فِي الْاَمْرِ

"हमने हर उम्मत के लिए क़ुर्बानी (और इबादत) के तरीक़े मुक़र्रर कर दिए हैं जिनकी वो पैरवी करते हैं, तो उन्हें आप ﷺ से इस मामले में झगड़ना नहीं चाहिए"

यानि बनी इस्राईल के लिये क़ुर्बानी का तरीक़ा और था, बनी इस्माईल किसी और तरीक़े से क़ुर्बानी करते थे, जबकि मुसलमानों को इन दोनों से मुख्तलिफ़ तरीक़ा बताया गया है। यह हर उम्मत की अपनी-अपनी शरीअत का मामला है, इसमें झगड़ने की कोई बात नहीं है। यह मज़मून इससे पहले आयत 34 में इस तरह आ चुका है:

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا لِّيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلٰي مَا رَزَقَهُمْ مِّنْۢ بَهِيْمَةِ الْاَنْعَامِ ۭ فَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ فَلَهٗٓ اَسْلِمُوْا ۭ وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِيْنَ

"और हर उम्मत के लिए हमने क़ुर्बानी का एक तरीक़ा बनाया है ताकि वो अल्लाह का नाम लिया करें उन मवेशियों पर जो उसने उन्हें अता किए हैं। तो (जान लो कि) तुम्हारा मअबूद एक ही है, चुनाँचे तुम उसके सामने सरे तस्लीम ख़म करो, और (ऐ नबी ﷺ) बशारत दे दीजिए आजिज़ी इख़्तियार करने वालों को।"

وَادْعُ اِلٰى رَبِّكَ ۭ اِنَّكَ لَعَلٰى هُدًى مُّسْتَقِيْمٍ ؁67

"और आप ﷺ अपने रब की तरफ़ बुलाते रहिए। यक़ीनन आप हिदायत के सीधे रास्ते पर हैं।"

आयत 68

وَاِنۡ جٰدَلُوۡكَ فَقُلِ اللّٰهُ اَعۡلَمُ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ ــ68

"और अगर यह लोग आप ﷺ से झगड़ें तो आप ﷺ कहिये कि अल्लाह बेहतर जानता है जो तुम कर रहे हो।"

मेरे पास जो हिदायत मेरे रब की तरफ़ से आई है मैं उसकी पैरवी कर रहा हूँ। अगर आप लोग समझते हैं कि मेरे मुक़ाबले में आप ज़्यादा हक़ पर हैं तो आप जानें और आपका रब जाने।

आयत 69

اَللّٰهُ يَحۡكُمُ بَيۡنَكُمۡ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ فِيۡمَا كُنۡتُمۡ فِيۡهِ تَخۡتَلِفُوۡنَ ــ69

"अल्लाह फ़ैसला कर देगा तुम्हारे माबैन क़यामत के दिन उन तमाम चीज़ों के बारे में जिनमें तुम इख़्तिलाफ़ करते रहे थे।"

आयत 70

اَلَمۡ تَعۡلَمۡ اَنَّ اللّٰهَ يَعۡلَمُ مَا فِى السَّمَآءِ وَالۡاَرۡضِ ؕ

"क्या तुम्हें मालूम नहीं कि अल्लाह जानता है जो कुछ आसमान में और ज़मीन में है?"

اِنَّ ذٰلِكَ فِىۡ كِتٰبٍ ؕ

"यक़ीनन यह सब कुछ एक किताब में (दर्ज) है।"

यह वही किताब है जिसे "उम्मुल किताब" भी कहा गया है, यानि अल्लाह तआला के इल्मे क़दीम की किताब।

اِنَّ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيۡرٌ ــ70

"यक़ीनन यह अल्लाह पर बहुत आसान है।"

तुम्हें यह मुश्किल मालूम होता है कि अल्लाह तआला एक-एक चीज़ का इल्म कैसे रखता है लेकिन अल्लाह के लिये यह कोई मुश्किल अम्र नहीं है।

आयत 71

وَيَعۡبُدُوۡنَ مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ مَا لَمۡ يُنَزِّلۡ بِهٖ سُلۡطٰنًا

"और वो परस्तिश करते हैं अल्लाह के सिवा ऐसी चीज़ों की जिनके बारे में उसने कोई सनद नहीं उतारी"

अग़रचे वो अल्लाह को मानते हैं लेकिन अल्लाह के अलावा भी बहुत सी चीज़ों की परस्तिश करते हैं, जिनके बारे में उनके पास कोई सनद नहीं है।

وَمَا لَيۡسَ لَهُمۡ بِهٖ عِلۡمٌ ؕ

"और उन्हें इसका कुछ इल्म भी नहीं।"

ना सिर्फ़ यह कि अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल शुदा कोई सनद नहीं बल्कि कोई असरी सबूत, कोई अक़्ली बुनियाद और कोई मन्तक़ी दलील भी उनके पास इन मनगढ़त मअबूदों की परस्तिश के लिए नहीं है।

وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ نَّصِيْرٍ ــ71

"और ऐसे ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं होगा।"

आयत 72

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيٰتُنَا بَيِّنٰتٍ تَعْرِفُ فِيْ وُجُوْهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الْمُنْكَرَ ۭ

"और जब उनको पढ़ कर सुनाई जाती हैं हमारी रौशन आयात तो तुम देखते हो उन काफ़िरों के चेहरों पर नागवारी के आसार।"

अल्लाह अज्ज़-व-जल्ल का कलाम सुन कर खुशी से खिल उठने की बजाय उनके चेहरों पर बेज़ारी और नागवारी के आसार पैदा हो जाते हैं।

يَكَادُوْنَ يَسْطُوْنَ بِالَّذِيْنَ يَتْلُوْنَ عَلَيْهِمْ اٰيٰتِنَا ۭ

"क़रीब होते हैं कि टूट पड़ें उन पर जो उनको हमारी आयात पढ़ कर सुनाते हैं।"

قُلْ اَفَاُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكُمْ ۭ

"आप कहिए: क्या मैं तुम्हें इससे बदतर चीज़ की खबर दूँ?"

यानि जिस क़द्र नागवारी तुम्हें इस वक़्त हो रही है और जिस क़द्र सख़्ती तुम पर इस वक़्त बीत रही है जब तुम्हें अल्लाह तआला की आयात पढ़ कर सुनाई जा रही हैं, क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि इससे बढ़ कर नागवार और सख़्त चीज़ तुम्हारे लिए क्या होगी?

اَلنَّارُ ۭ وَعَدَهَا اللّٰهُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ــ72

"वो है आग! जिसका वादा किया है अल्लाह ने काफ़िरों से। और वो बहुत ही बुरा ठिकाना है।"

आयात 73 से 78 तक

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ ضُرِبَ مَثَلٌ فَاسْتَمِعُوْا لَهٗ ۭ اِنَّ الَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ لَنْ يَّخْلُقُوْا ذُبَابًا وَّلَوِ اجْتَمَعُوْا لَهٗ ۭ وَاِنْ يَّسْلُبْهُمُ الذُّبَابُ شَيْــــًٔا لَّا يَسْتَنْقِذُوْهُ مِنْهُ ۭ ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوْبُ ــ73 مَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ ــ74 اَللّٰهُ يَصْطَفِيْ مِنَ الْمَلٰۗىِٕكَةِ رُسُلًا وَّمِنَ النَّاسِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌۢ بَصِيْرٌ ــ75 يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيْهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ ۭ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ــ76 يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا ارْكَعُوْا وَاسْجُدُوْا وَاعْبُدُوْا رَبَّكُمْ وَافْعَلُوا الْخَيْرَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ــ77ۚ وَجَاهِدُوْا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهٖ ۭ هُوَ اجْتَبٰىكُمْ وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّيْنِ مِنْ حَرَجٍ ۭ مِلَّةَ اَبِيْكُمْ اِبْرٰهِيْمَ ۭ هُوَ سَمّٰىكُمُ الْمُسْلِمِيْنَ ڏ مِنْ قَبْلُ وَفِيْ هٰذَا لِيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ شَهِيْدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُوْنُوْا شُهَدَاۗءَ عَلَي النَّاسِ ښ فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاعْتَصِمُوْا بِاللّٰهِ ۭ هُوَ مَوْلٰىكُمْ ۚ فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيْرُ ــ78

इस सूरह मुबारका का आख़री रुकूअ अपने मज़ामीन के ऐतबार से बहुत अहम है। इस ऐतबार से यह हमारे "मुताअला-ए-क़ुरान हकीम के मुन्तख़ब निसाब" में भी शामिल है। चुनाँचे इस रुकूअ के मुताअले से पहले मैं "मुन्तख़ब निसाब" और उसकी ग़र्ज़ व ग़ायत के हवाले से भी चंद बातें अर्ज़ करना चाहता हूँ।

अल्हम्दुलिल्लाह! हमने "रुजूअ इलल क़ुरान" की जो तहरीक शुरु कर रखी है और अल्लाह की तौफ़ीक़ से अब तक मैं इसमें अपनी ज़िन्दगी के

साल सर्फ़ कर चुका हूँ (वाज़ेह रहे कि यह दुरूस जिन पर "बयानुल क़ुरान" मुश्तमिल है, 1998 ई. के हैं) इसी तहरीक की कोख से तन्ज़ीम-ए-इस्लामी और तहरीक-ए-ख़िलाफ़त ने जन्म लिया है, हमारी इस दावत "रुजूअ इलल क़ुरान" की बुनियाद "मुताअला क़ुरान हकीम का मुन्तख़ब निसाब" है। इस मुन्तख़ब निसाब को मैंने ज़रिया बनाया है लोगों को क़ुरान से मुतआरुफ़ कराने का और एक मुसलमान पर दीन की तरफ़ से जो बुनियादी फ़राइज़ आयद होते हैं उन फ़राइज़ का एक जामेअ तसव्वुर उनके सामने रखने का। यानि दीन के वो फ़राइज़ जिनके बारे में हमसे क़यामत के दिन बाज़पुर्स होनी है उनका एक सही तसव्वुर मुख़्तसर अल्फ़ाज़ में हमारे सामने आ जाये। जहाँ तक नमाज़, रोज़ा वग़ैरह का ताल्लुक़ है, उसके बारे में तो सब जानते हैं कि वो बुनियादी फ़राइज़ में से हैं, लेकिन क्या हम पर उसके अलावा भी कुछ फ़राइज़ आयद होते हैं? क्या हम कुछ और उमूर में भी मस्ऊल हैं? क्या ब-हैसियत मुसलमान इससे बढ़ कर कुछ मज़ीद भी हमारी ज़िम्मेदारी है? इन सब सवालात के जवाबात उस मुन्तखब निसाब के मुताअले में मौजूद हैं। यह निसाब तक़रीबन दो पारों के बराबर है। यानि हुज्म के ऐतबार से यह क़ुरान मज़ीद का 1/15 वाँ हिस्सा है।

क़ुरान मज़ीद के अब तक के मुताअले (बयानुल क़ुरान) के दौरान हम मुन्तख़ब निसाब के कुछ हिस्सों का मुताअला भी कर आये हैं, लेकिन चूँकि इस निसाब में ज़्यादातर आयात और सूरतें क़ुरान हकीम के निस्फ़े सानी बल्कि आख़री हिस्से से शामिल हुई हैं, इसलिए ज़्यादातर मक़ामात का मुताअला अभी बाक़ी है। अग़रचे इन मक़ामात और अस्बाक़ का इंतख़ाब करते हुए यह बात मेरे ज़हन में नहीं थी कि क़ुरान के किस हिस्से से कितना हिस्सा मुन्तख़ब किया जाये, लेकिन अमली तौर पर क़ुरान के आख़री हिस्से से ज़्यादा आयात मुन्तख़ब हुई हैं। इस सूरतेहाल की एक बहुत ख़ूबसूरत मुशाबेहत हुरूफ़-ए-मुक़त्तआत के साथ है जिसकी तरफ़ आज अचानक मेरा ज़हन मुन्तक़िल हुआ है और वह यह कि अरबी के 28 या 29 हुरूफ़-ए-तहज्जी की जो तख्ती है उसके निस्फ़े अव्वल में से बहुत कम हुरूफ़ हैं जो हुरूफ़-ए- मुक़त्तआत में शामिल हुए हैं, जबकि इस तख्ती के निस्फ़े सानी में से बहुत से हुरूफ़ हैं जो हुरूफ़-ए-मुक़त्तआत में आये हैं। यह तो बहरहाल एक इज़ाफ़ी नुक़्ता था। इस वक़्त मुन्तख़ब निसाब के अमूमी तआरुफ़ और उसमें सूरतुल हज के आख़री रुकूअ की अहमियत के हवाले से बात हो रही है।

इस मुन्तख़ब निसाब के कुल छह हिस्से हैं। पहला हिस्सा "जामेअ अस्बाक़" पर मुश्तमिल है। इसका आग़ाज़ सूरतुल अस्र से होता है जो क़ुरान हकीम की एक मुख़्तसर मगर इंतहाई जामेअ सूरत है। इसमें इंसान की निजाते उख़रवी के चार लवाज़िम यानि ईमान, अमल-ए-सालेह, तवासी बिल हक़ और तवासी बिल सब्र बयान हुए हैं। इसके बाद पहले हिस्से में क़ुरान के तीन ऐसे जामेअ मक़ामात शामिल किए गये हैं जिनमें निजात के उन्हीं चारों लवाज़िम का ज़िक्र तफ़सील के साथ है। पहले हिस्से का दूसरा दर्स सूरतुल बक़रह की आयत 177 (आयतुल बिर्र) पर मुश्तमिल है जिसमें नेकी की हक़ीक़त पर तफ़सीली बहस हुई है कि यूँ तो हर शख़्स अपने ज़हन में नेकी का एक अपना तसव्वुर रखता है लेकिन असल और जामेअ नेकी कौनसी है? नेकी की रूह क्या है? उसकी जड़ और बुनियाद क्या है? उसका सबसे ऊँचा मक़ाम क्या है? और उसका मक़ामे मतलूब कौनसा है?

हिस्सा दौम में ईमान से मुताल्लिक़ मुबाहिस हैं कि ईमान क्या है और यह कैसे वजूद में आता है? इस हिस्से के दुरूस में सूरतुल फ़ातिहा का दर्स, सूरह आले इमरान के आख़री रुकूअ की आयात का दर्स और सूरतुन्नूर के पाँचवें रुकूअ का दर्स शामिल हैं। इस निसाब का तीसरा हिस्सा आमाले सालेहा के बारे में है। इसमें इन्फ़रादी व इज्तमाई सतह पर और फिर मआशरती व रियासती सतह पर आमाले सालेहा की अहमियत, कैफ़ियत, ज़रूरत वगैरह पर रौशनी डाली गई है। मआशरती सतह पर आमाले सालेहा की तफ़सीलात के सिलसिले में सूरह बनी इस्राईल के तीसरे और चौथे रुकूअ का अहम दर्स भी इस हिस्से में शामिल है। (इन आयात में जो अहकाम मज़कूर हैं वो तौरात के "अहकामे अशरह" यानि Ten Commandments की क़ुरानी तशरीह व ताबीर का दर्जा रखते हैं।)

मुन्तख़ब निसाब के चौथे हिस्से का पहला दर्स सूरतुल हज के उस रुकूअ पर मुश्तमिल है जो अब आप हमारे ज़ेरे मुताअला आ रहा है। गोया इसकी जगह मुन्तख़ब निसाब के ऐन वस्त (बीच) में है। क़ुरान की दावत के ऐतबार से यह क़ुरान हकीम का जामेअ तरीन मक़ाम है। इसमें क़ुरानी दावत को दो हिस्सों में तक़सीम करके बयान फ़रमाया गया है। यानि एक दावते अमूमी और दूसरी दावते ख़ुसूसी। क़ुरान की दावते अमूमी बनी नौ इंसान के हर फ़र्द के लिए है। कोई फ़र्द दुनिया के किसी गोशे या किसी नस्ल से ताल्लुक़ रखता हो, कसे बाशद! वो क़ुरान की इस दावत का मुख़ातब है। यह अमूमी दावत दरअसल ईमान की दावत है। चूँकि नबी अखिरुज्ज़मान ﷺ की बेसअत दुनिया के तमाम इंसानों के लिए है: {وَمَآ اَرۡسَلۡنٰكَ اِلَّا كَآفَّةً لِّلنَّاسِ بَشِيۡرًا وَّنَذِيۡرًا} (सबा 28) इसलिए ईमान की यह दावत तमाम इंसानों के लिए है कि लोगो! अल्लाह पर ईमान लाओ, रसूल पर लाओ, आख़िरत, बअसे बादल मौत, जन्नत और दोजख़ पर ईमान लाओ! यह पहले दर्जे की दावत है और पहले दर्जे में सिर्फ़ मानने की दावत ही दी जा सकती है। इस दर्जे पर अमल (नमाज़, रोज़ा वग़ैरह) की दावत नहीं दी जा सकती, क्योंकि जो इंसान अल्लाह, रसूल और क़ुरान को नहीं मानता उसके लिए नमाज़ और रोज़े की क्या अहमियत हो सकती है!

इसके बाद ख़ुसूसी दावत का दर्जा है और उसके मुख़ातब वो लोग हैं जो पहली दावत यानि दावते ईमान पर लब्बैक कहते हैं। यानि जो लोग दावते ईमान को क़ुबूल करेंगे उन्हें दावते अमल के ज़रिये ईमान के तक़ाज़े पूरे करने की ज़रूरत व अहमियत से आगाह किया जायेगा। चुनाँचे इस रुकूअ की छः आयात में दावते क़ुरानी के इन दोनों (अमूमी और ख़ुसूसी) दर्जों को अलैहदा-अलैहदा बयान किया गया है। पहली चार आयात में "يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ" के अल्फ़ाज़ से पूरी बनी नौए इंसान को ख़िताब किया गया है, जबकि आखरी दो आयात में "يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا" के अल्फ़ाज़ के साथ अहले ईमान को दावते अमली दी गई है।

आयत 73

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ ضُرِبَ مَثَلٌ فَاسۡتَمِعُوۡا لَهٗ ؕ

"ऐ लोगो! एक मिसाल बयान की जाती है,
पस उसे ज़रा तवज्जोह से सुनो!"

اِنَّ الَّذِيۡنَ تَدۡعُوۡنَ مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ لَنۡ يَّخۡلُقُوۡا ذُبَابًا وَّلَوِ اجۡتَمَعُوۡا لَهٗ ؕ

"यक़ीनन (तुम्हारे वो मअबूद) जिन्हें तुम
अल्लाह के सिवा पुकारते हो एक मक्ख़ी भी

तख्लीक़ नहीं कर सकते अगरचे वो सब
इसके लिए इकठ्ठे हो जायें।"

चूँकि इसके मुख़ातबे अव्वल मक्के के बुतपरस्त थे इसलिए उन्हें शऊर दिलाने के लिए उनके बुतों की मिसाल दी गई है कि ख़ाना काबा में सजाये गये तुम्हारे यह तीन सौ साठ बुत मिल कर भी कोशिश कर लें तब भी एक मक्खी तक नहीं बना सकते। यह वही अंदाज़ है जो हज़रत इब्राहीम अलै. ने अपनी क़ौम के लोगों के सामने बुतों की बेबसी ज़ाहिर करने के लिए अपनाया था। आप अलै. ने बुतों को तोड़ कर उनके पुजारियों को अपने गिरेबानों में झाँकने पर मजबूर कर दिया था।

"और अगर मक्खी उनसे कोई चीज़ झीन ले जाये तो यह उससे वह चीज़ छुड़ा नहीं सकते।"

وَاِنْ يَّسْلُبْهُمُ الذُّبَابُ شَيْـــًٔا لَّا يَسْتَنْقِذُوْهُ مِنْهُ ؕ

यानि मक्खी को तख़्लीक़ करना तो बहुत दूर की बात है, यह तो अपने ऊपर से मक्खी को उड़ा भी नहीं सकते। अगर कोई मक्खी उनके सामने पड़े हुए हलवों-मान्डों में से कुछ ले उड़े तो उससे वह चीज़ वापस भी नहीं ले सकते।

"किस क़द्र कमज़ोर हैं तालिब भी और मतलूब भी!"

ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوْبُ —73

इस मज़मून पर यह जुमला इस क़द्र जामेअ है कि क़ुरान मज़ीद के नज़रिया-ए-तौहीद का अमली लुब्बे-लुबाब इन तीन अल्फ़ाज़ में समा गया है। हक़ीक़त यह है कि हर बा-शऊर इंसान का एक नस्बुल ऐन, आइडियल व आदर्श होता है, जिसके हसूल के लिए वह दिन-रात भाग-दौड़ करता है। इंसान की शख़्सियत और उसका आइडियल आपस में एक-दूसरे की पहचान के लिये मैयार और कसौटी फ़राहम करते हैं। किसी इंसान का मैयार उसके आइडियल से पहचाना जाता है। और किसी आइडियल का मैयार उसके चाहने वाले के मैयार से परखा जाता है। अगर किसी इंसान का आइडियल घटिया है तो लाज़िमन वो इंसान ख़ुद भी उसी सतह पर होगा और अगर किसी का आइडियल आला होगा तो वो ख़ुद भी आला शख़्सियत का मालिक होगा। इस उसूल पर उन लोगों के ज़हनों के मैयार और सोचों की सतह का अंदाज़ा लगाया जा सकता है जो पत्थर के बुतों को अपने मअबूद समझ कर उनके आगे झुकते हैं। जिस तालिब का मतलूब और आइडियल एक ऐसा बेजान मुजस्समा है जो अपने ऊपर से एक मक्खी तक को नहीं उड़ा सकता, उसकी अपनी शख़्सियत का क्या हाल होगा: *"क़यास कुन ज़ गुलिस्ताने मन बहारे मरा!"*

यह मज़मून ज़रा मुख़्तलिफ़ अंदाज़ में सूरह बक़रह में इस तरह आ चुका है: {وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّتَّخِذُ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُّحِبُّوْنَهُمْ كَحُبِّ اللّٰهِ ؕ} (आयत 165) कि लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं जो अल्लाह के मद्दे-मुक़ाबिल कुछ मअबूद बना कर उनसे ऐसे मोहब्बत करना शुरु कर देते हैं जैसे अल्लाह से मोहब्बत करनी चाहिए। इसके बरअक्स तौहीद का सबक़ तो यह है: !لَا مَحْبُوْبَ اِلَّا اللّٰه ! لَا مَقْصُوْدَ اِلَّا اللّٰه ! لَا مَطْلُوْبَ اِلَّا اللّٰه यानि इंसान का महबूब व मक़सूद व मतलूब सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह है।

बाक़ी कोई शय मतलूब व मक़सूद नहीं है, बाक़ी सब ज़राय हैं। इंसान को ज़िन्दा रहने के लिए और अपनी ज़रूरियाते ज़िन्दगी पूरी करने के लिये मुख़्तलिफ़ ज़राय से मदद लेनी पड़ती है। इस सिलसिले में तौहीद का तक़ाज़ा यही है कि इन सब चीज़ों को ज़राय के तौर पर इस्तेमाल ज़रूर करें मगर इन्हें अपना मतलूब व मक़सूद ना बनायें। ना खेती को, ना दुकान को, ना किसी हुनर को, ना किसी पेशे को, ना किसी रिश्तेदार और ना औलाद को! यह है तौहीद का लुब्बे-लुबाब!

जो शख़्स तौहीद के इस तसव्वुर तक नहीं पहुँच सकता और अल्लाह की मअरफ़त इस अंदाज़ में हासिल नहीं कर सकता, उसके ज़हन की पस्ती उसे अल्लाह को छोड़ कर तरह-तरह की चीज़ों की परस्तिश करना सिखाती है और फिर उसी डगर पर चलते हुए कोई वतन परस्त ठहरता है तो कोई क़ौम परस्त क़रार पाता है। कोई दौलत की देवी का पुजारी बन जाता है तो कोई अपने नफ़्स को मअबूद बना कर अपने ही हरीम ज़ात के गिर्द तवाफ़ शुरु कर देता है। *"अपने ही हुस्न का दीवाना बना फिरता हूँ!"*

आयत 74

مَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖ ۔

"इन्होंने अल्लाह की क़द्र ना की जैसा कि उसकी क़द्र का हक़ था।"

ऐसे लोग अल्लाह की कमा-हक़्क़ा मअरफ़त हासिल ना कर सके और जलाल व जमाले इलाही की कोई झलक ना देख सके और यूँ दुनिया और उसकी चीज़ों को असल मतलूब व मक़सूद समझ कर इस अरूसे हज़ार दामाद के आशिक़ बन बैठे!

اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِیٌّ عَزِیۡزٌ ۔74

"यक़ीनन अल्लाह बहुत ताक़त वाला, सब पर ग़ालिब है।"

आयत 75

اَللّٰهُ یَصۡطَفِیۡ مِنَ الۡمَلٰٓئِکَۃِ رُسُلًا وَّمِنَ النَّاسِ ؕ

"अल्लाह चुन लेता है अपने पैग़ाम्बर फ़रिश्तों में से भी और इंसानों में से भी।"

اِنَّ اللّٰهَ سَمِیۡعٌۢ بَصِیۡرٌ ۔75

"यक़ीनन अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, देखने वाला है।"

यहाँ रिसालत के दोनों वास्तों का ज़िक्र कर दिया गया है जिसमें एक "रसूले मलक" है और दूसरा "रसूले बशर" है। चुनाँचे फ़रिश्तों में से हज़रत जिब्रील अलै. को चुना गया और इंसानों में से हज़रत मुहम्मद ﷺ को। और यूँ रसूले मलक के ज़रिये रसूले बशर तक पैग़ाम पहुँचाया गया ताकि वो अपने अब्नाये नौए तक उसे पहुँचा दें।

आयत 76

یَعۡلَمُ مَا بَیۡنَ اَیۡدِیۡہِمۡ وَمَا خَلۡفَہُمۡ ؕ

"वो जानता है जो कुछ उनके सामने है और जो कुछ उनके पीछे है।"

وَاِلَى اللّٰهِ تُرۡجَعُ الۡاُمُوۡرُ ــ76

"और अल्लाह ही की तरफ़ तमाम मामलात लौटा दिए जायेंगे।"

इस आयत में आख़िरत का ज़िक्र भी आ गया और यूँ इस दावते अमूमी में अमूरे सलासा यानि तौहीद, रिसालत और आख़िरत का ज़िक्र कर दिया गया। याद रहे कि इस दावत में या अय्युहन्नास (आयत 37) के अल्फ़ाज़ से नौए इंसानी के तमाम अफ़राद को मुख़ातिब किया गया है।

अब दूसरे मरहले की दावत उन ख़ुसूसी लोगों के लिए है जिन्होंने इस पहली दावत पर लब्बैक कहा कि हम एक अल्लाह को मअबूद मानते हैं, मुहम्मद ﷺ को अल्लाह का रसूल तस्लीम करते हैं, बअसे बादल मौत पर भी यक़ीन रखते हैं और इन्नालिल्लाही व इन्ना इलय्ही राजिऊन के फ़लसफ़े पर भी ईमान रखते हैं, वो लोग अहले ईमान क़रार पाये। अब अगले मरहले में उन्हीं लोगों को अमल की दावत दी जा रही है। इस अंदाज़े दावत में एक वाज़ेह फ़र्क़ यह है कि इसमें फ़अले अम्र का इस्तेमाल किया गया है, यानि इस दावत का अंदाज़ हुक्मिया है। पहली दावत में फ़अले अम्र का इस्तेमाल सिर्फ़ मिसाल सुनाने की हद तक हुआ था: {فَاسۡتَمِعُوۡا لَهٗ} कि यह मिसाल जो बयान की जा रही है उसे ग़ौर से सुनो! लेकिन जो लोग इस दावत को मान कर इस्लाम के दायरे में आ गये हैं उन्हें अब बाक़ायदा हुक्म दिया जा रहा है:

आयत 77

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوا ارۡكَعُوۡا وَاسۡجُدُوۡا وَاعۡبُدُوۡا رَبَّكُمۡ

"ऐ ईमान के दावेदारो! झुक जाओ और सर-ब-सुजूद हो जाओ और अपने रब की बंदगी करो"

यहाँ सिर्फ़ इस्तलाही रुकूअ और सजदा ही मुराद नहीं बल्कि अल्लाह तआला के हर हुक्म के सामने मुकम्मल तौर पर सरे तस्लीम ख़म कर देने का हुक्म है। इसी तरह "इबादत" के हुक्म में भी "मुकम्मल बंदगी" का मफ़हूम पिन्हा है।

ज़िन्दगी आमद बराय बंदगी
ज़िन्दगी बे बंदगी शर्मिंदगी!

وَافۡعَلُوا الۡخَيۡرَ

"और नेक काम करो"

यहाँ ग़ौरतलब बात यह है कि وَاعۡبُدُوۡا (बंदगी करो!) के हुक्म में तो गोया सब कुछ आ गया। अब इसके बाद मज़ीद नेक काम कौनसे हैं? दरअसल "फ़अले ख़ैर" से यहाँ मुराद ख़िदमते ख़ल्क़ है। इस हुक्म से मुराद यह है कि अपने आपको ख़िदमते ख़ल्क़ में लगा दो! और ख़िदमते ख़ल्क़ सिर्फ़ भूखे को खाना खिलाने तक ही महदूद नहीं बल्कि सबसे बड़ी ख़िदमते ख़ल्क़ यह है कि लोगों की आक़बत सँवारने की कोशिश की जाये। चुनाँचे इस हुक्म में यह भी शामिल है कि ऐ अल्लाह के बंदों! ईमान व अमल के जो हक़ाइक़ तुम पर मुन्कशिफ़ हो गये हैं उनसे दूसरे लोगों को भी रौशनास कराओ, ताकि वो जहन्नम का ईंधन बनने से बच जायें।

لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ـــ77ۚ

“ताकि तुम फ़लाह पाओ!”

स्याक़ व सबाक़ के ऐतबार से यह बहुत अहम बात है। मतलब यह है कि ऐ ईमान के दावेदारो! कहीं तुम यह ना समझ बैठना कि ईमान का इक़रार कर लिया तो बस अब फ़लाह ही फ़लाह है। बस कलमा पढ़ लिया और कामयाबी हो गई। नहीं ऐसा नहीं! *“यह शहादत गहे उल्फ़त में क़दम रखना है!”* तुम लोगों ने इस शहादत गाह में क़दम रखा है तो अब इसके तक़ाज़े पूरे करोगे तो तब कामयाबी होगी। अगर तुम यह समझ बैठे हो कि बस मुसलमान हो गये हैं और और अब बैठे-बिठाये हमें जन्नत मिल जायेगी तो यह तुम्हारा अपना ख़्याल है, तुम्हारी अपनी दिलखुश कुन तमन्ना (wishful thinking) है। जैसे कि बनी इस्राईल के बारे में फ़रमाया गया: { تِلْكَ اَمَانِيُّهُمْ } (बक़रह 111) “यह उनकी तमन्नायें हैं।”

इमाम शाफ़ी रह. की राय है कि सूरतुल हज की इस आयत की तिलावत पर सज्दा-ए-तिलावत करना चाहिए, जबकि इमाम अबु हनीफ़ा रह. के नज़दीक यह आयत-ए-सज्दा नहीं है। इस ज़िमन में यह भी वाज़ेह रहे कि आयते सज्दा पर सज्दा-ए-तिलावत करना इमाम अबु हनीफ़ा रह. के नज़दीक वाजिब जबकि इमाम शाफ़ी रह. के नज़दीक मुस्तहब है।

आयत 78

وَجَاهِدُوْا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهٖ ۭ

“और जिहाद करो अल्लाह के लिए जैसा कि उसके लिए जिहाद का हक़ है।”

هُوَ اجْتَبٰىكُمْ

“उसने तुम्हें चुन लिया है”

अब नबुवत मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ख़त्म हो चुकी है। आइंदा जिब्रील अलै. किसी के पास वही लेकर नहीं आयेंगे। उन्होंने जो वही पहुँचानी थी पहुँचा दी है और अल्लाह तआला के तमाम अहकाम मुहम्मद ﷺ ने तुम लोगों तक पहुँचा दिये हैं। अब इन अहकाम को, इस दावत को तमाम नौए इंसानी तक पहुँचाने के लिए अल्लाह ने तुम्हारा इन्तेख़ाब किया है। तमाम इंसानों में से तुम्हें चुन लिया गया है, इस अज़ीमुश्शान मिशन के लिए तुम्हारा सलेक्शन हो गया है। चुनाँचे तुम अपने नसीब पर फ़ख़्र करो और इस काम में लग जाओ।

وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّيْنِ مِنْ حَرَجٍ ۭ

“और दीन के मामले में तुम पर कोई तंगी नहीं रखी।”

مِلَّةَ اَبِيْكُمْ اِبْرٰهِيْمَ ۭ

“तुम्हारे जद्दे अमजद इब्राहीम की मिल्लत।”

هُوَ سَمّٰىكُمُ الْمُسْلِمِيْنَ ڏ

“उसी ने तुम्हारा नाम मुस्लिम रखा है”

अल्लाह तआला ने तुम लोगों को “मुस्लिम” का ख़िताब दिया है और तुम्हारे जद्दे अमजद इब्राहीम अलै. ने भी तुम्हारा यही नाम रखा था। सूरतुल बक़रह आयत 128 में हज़रत इब्राहीम अलै. की दुआ के यह अल्फ़ाज़ नक़ल

हुए हैं: {رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَآ اُمَّةً مُّسْلِمَةً لَّكَ} "परवरदिगार! हमें भी अपना फ़रमाबरदार (मुस्लिम) बना कर रखियो और हमारी औलाद से भी एक उम्मते मुस्लिमा उठाइयो!"

"इससे पहले भी (तुम्हारा यही नाम था) और इस (किताब) में भी है" مِنْ قَبْلُ وَفِيْ هٰذَا

"ताकि पैग़म्बर तुम पर ग़वाह हो और तुम लोगों पर गवाह हो।" لِيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ شَهِيْدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَي النَّاسِ ش

यह वही मज़मून है जो सूरतुल बक़रह की आयत नम्बर 143 में आया है: {وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَي النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا} "और (ऐ मुस्लमानो!) इसी तरह हमने तुम्हें एक उम्मते वसत बनाया है, ताकि तुम लोगों पर ग़वाह हो और रसूल तुम पर ग़वाह हो।" सिर्फ यह फ़र्क़ है कि वहाँ पहले उम्मत का ज़िक्र है और फिर रसूल का, जबकि यहाँ पहले रसूल और बाद में उम्मत का ज़िक्र है। पस ऐ अहले ईमान! इस ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह से समझ लो और अब बिस्मिल्लाह करो! क़दम आगे बढ़ाओ! और देखो तुम्हारा सबसे पहला क़दम कौनसा उठना चाहिए:

"पस नमाज़ क़ायम करो और ज़कात अदा करो, और अल्लाह के साथ चिमट जाओ।" فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاعْتَصِمُوْا بِاللّٰهِ

अल्लाह तुम्हारा हिमायती और पुश्तपनाह है, तुम उसके दामन से वाबस्ता हो जाओ।

"वह तुम्हारा मौला है, तो क्या ही अच्छा है वह मौला और क्या ही अच्छा है मददगार!" هُوَ مَوْلٰكُمْ ۚ فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيْرُ ۔78

"मौला" के मफ़हूम में आक़ा, हिमायती, पुश्तपनाह, मलजा व मावा और मरजअ के मायने शामिल हैं।

इस रुकूअ के मज़ामीन बहुत अहम हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि इसके अहम नुकात एक दफ़ा फिर ज़हन में ताज़ा कर लिए जायें। इस रुकूअ में पहला सबक़ तौहीद से मुताल्लिक़ है और इसका लुब्बे-लुबाब यह है कि एक इंसान का मतलूबे हक़ीक़ी, महबूबे हक़ीक़ी और मक़सूदे असली सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह ही हो। उसके बाद दूसरा नुक़्ता रिसालत से मुताल्लिक़ है। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसत तक रिसालत का सिलसिला सिर्फ़ दो वास्तों पर मुश्तमिल था, यानि रसूले मलक और रसूले बशर। लेकिन अब दौरे मुहम्मदी ﷺ में एक तीसरे वास्ते का इज़ाफ़ा किया गया और उम्मते मुस्लिमा को भी एक मुस्तक़िल कड़ी के तौर पर रिसालत के सिलसिलातुल ज़हब (सुनहरी ज़ंजीर) में मुन्सलिक कर दिया गया है। इस ज़िम्मेदारी के लिए उम्मते मुस्लिमा के इन्तेख़ाब का ज़िक्र अल्लाह तआला ने इस रुकूअ (आयत 78) में {هُوَ اجْتَبٰىكُمْ} के अल्फ़ाज़ से किया गया है, जबकि क़ब्ल अज़ें आयत 75 में रसूले मलक और रसूले बशर के लिए "इस्तिफ़ाअ" का लफ्ज़ इस्तेमाल हुआ है : {اَللّٰهُ يَصْطَفِيْ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ رُسُلًا وَّمِنَ النَّاسِ}। इस्तिफ़ाअ और इज्तिबाअ

दोनों अल्फ़ाज़ मायने के ऐतबार से आपस में मिलते-जुलते हैं और ख़ुद हुज़ूर ﷺ के लिए (मुहम्मद मुस्तफ़ा और अहमद मुज्तबा) भी मुस्तअमिल हैं।

इस रुकूअ का तीसरा मज़मून "शहादत अलन्नास" के बारे में है। इस ज़िमन में सूरतुल हज की आयत 78 के अल्फ़ाज़ की सूरतुल बक़रह की आयत 143 के अल्फ़ाज़ से बहुत क़रीबी मुशाबेहत है, बल्कि दोनों मक़ामात पर अल्फ़ाज़ एक जैसे हैं, सिर्फ़ तरतीब का फ़र्क़ है। सूरतुल बक़रह की आयत 143 के अल्फ़ाज़ यह हैं: {لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَي النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا} जबकि सूरह हज में अल्फ़ाज़ की तरतीब यूँ है:{لِيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ شَهِيْدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَي النَّاسِ} (मज़मून और अल्फ़ाज़ के ऐतबार से जो निस्बत इन दो आयात की आपस में है बिल्कुल वही निस्बत सूरह अन्निसा की आयत नम्बर 135 के इन अल्फ़ाज़: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ} की सूरतुल मायदा की आयत 8 के इन अल्फ़ाज़: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ ۡ} के साथ है।)

चुनाँचे इस ऐतबार से उम्मते मुस्लिमा पर शहादत अला अन्नास और पैग़ामे रिसालत की दावत व तब्लीग़ की भारी ज़िम्मेदारी आयद होती है, जिसके बारे में क़यामत के दिन बहुत सख़्त जवाबदेही होगी। इस जवाबदेही के बारे में सूरह आराफ़ की यह आयत (आयत नम्बर 6) बहुत वाज़ेह है: {فَلَنَسْـَٔلَنَّ الَّذِيْنَ اُرْسِلَ اِلَيْهِمْ وَلَنَسْـَٔلَنَّ الْمُرْسَلِيْنَ}। चुनाँचे वहाँ उम्मते मुस्लिमा से ब-हैसियत-ए-मज्मुई जवाब तल्बी होगी कि तुम लोगों ने अपनी इस ज़िम्मेदारी को किस हद तक निभाया था? यानि जो दीन तुम लोगों तक आख़री नबी ﷺ के ज़रिये पहुँचा था क्या तुम लोगों ने उसे पूरी नौए इंसानी तक पहुँचा दिया था? और अगर यह ज़िम्मेदारी उम्मत ने कमा-हक़्क़ा पूरी नहीं की होगी तो पूरी उम्मत ब-हैसियत-ए-मज्मुई मुजरिम क़रार पायेगी। और चूँकि आज उम्मते मुस्लिमा मज्मुई तौर पर अपनी ज़िम्मेदारी का हक़ अदा नहीं कर रही है इसलिए अपने इसी जुर्म की पादाश में इज्तमाई तौर पर ज़लील व ख़्वार हो रही है। और बक़ौल अल्लामा इक़बाल आज इसकी कैफ़ियत यह है कि:

हमियत नाम था जिसका, गई तैमूर के घर से!

दुनिया की ज़िल्लत व ख़्वारी की यही सज़ा इससे पहले बनी इस्राईल को उनके इज्तमाई जराइम की पादाश में मिल चुकी है, जिसका ज़िक्र सूरतुल बक़रह में इस तरह आया है: {وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ ۗ وَبَآءُوْ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ} (आयत 61)। इसलिए की इज्तमाई जराइम की सज़ा क़ौमों को दुनिया में ही दे दी जाती है।

उम्मते मुस्लिमा इज्तमाई तौर पर तो इस सिलसिले में क़सूरवार है ही, मगर उख़रवी मुहासबे के दौरान हर शख़्स अपनी इन्फ़रादी हैसियत में भी जवाबदेह होगा। चुनाँचे उसके लिए हम में से हर शख़्स को फ़िक्रमंद होना चाहिए कि वो अपने ऊपर आयद होने वाले इस फ़र्ज़ को किस हद तक निभा रहा है और क़यामत के दिन उसने इस सिलसिले में क्या जवाब देना है। क्या वो अपनी दुनिया की ज़िन्दगी में सिर्फ़ दौलत कमाने और जायदादें बनाने के एक कभी ना ख़त्म होने वाले चक्कर में पड़ा रहा या उसने दावते क़ुरान और तब्लीगे दीन के फ़रीज़े को अदा करने की भी कोशिश की और अपनी दौलत, सलाहियतों और जान की क़ुर्बानियों के ज़रिये इस्तताअत भर इस काम में भी अपना हिस्सा डाला?

بارک اللہ لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم